अध्याय 4

यीशु के दृष्टांत

मरकुस में 4 और 13 केवल दो अध्यायों में यीशु की शिक्षाओं पर फोकस किया गया है। अध्याय 13 एकांत में चेलों को सिखाने पर फोकस करता है जबकि अध्याय 4 उसके सार्वजनिक शिक्षा देने के नमूने देता है।[1] इस अध्याय में बीज बोने वाले, पैमाने के नीचे दीपक, उगने वाले बीज और राई के दाने के उसके दृष्टांत हैं।

नये नियम में दृष्टांतों का इस्तेमाल केवल यीशु ने किया।[2] उत्तम गुरु के रूप में, उसने दृष्टांतों का इस्तेमाल इस प्रकार से किया जैसे किसी और ने नहीं किया है। भजन 78:2 में इस ढंग की भविष्यद्वाणी ''प्राचीनकाल की गुप्त बातें'' के रूप में की गई और यीशु ने कहा यह भविष्यद्वाणी मत्ती 13:34, 35 में पूरी हो रही थी। उसने जान-बूझकर इन बेपरवाह और उदासीन सुनने वालों से अपने संदेशों को छिपाया। उसके दृष्टांत केवल साधारण कामों की कहानियां नहीं होते थे। उसने अपने चेलों को उनके अर्थ बताए जब उन्होंने पूछा कि उनका अर्थ क्या था (मत्ती 13:36-52)। उनके गहरे विचार तभी समझ में आ सकते हैं जब सुनने वाला उनके अर्थों को समझने के लिए थोड़ी देर उन पर विचार करे।

बीज बोने वाले का दृष्टांत (4:1-9)[3]

**1वह फिर झील के किनारे उपदेश देने लगा: और ऐसी बड़ी भीड़ उसके पास इकट्ठी
हो गई कि वह झील में एक नाव पर चढ़कर बैठ गया, और सारी भीड़ भूमि पर झील
के किनारे खड़ी रही। 2और वह उन्हें दृष्टान्तों में बहुत सी बातें सिखाने लगा, और अपने
उपदेश में उनसे कहा, 3''सुनो! एक बोनेवाला बीज बोने निकला। 4बोते समय कुछ मार्ग
के किनारे गिरा और पक्षियों ने आकर उसे चुग लिया। 5कुछ पथरीली भूमि पर गिरा जहाँ
उसको बहुत मिट्टी न मिली, और गहरी मिट्टी न मिलने के कारण जल्द उग आया, 6और
जब सूर्य निकला तो जल गया, और जड़ न पकड़ने के कारण सूख गया। 7कुछ झाड़ियों
में गिरा, और झाड़ियों ने बढ़कर उसे दबा दिया, और वह फल न लाया। 8परन्तु कुछ अच्छी
भूमि पर गिरा, और वह उगा और बढ़कर फलवन्त हुआ; और कोई तीस गुणा, कोई साठ
गुणा और कोई सौ गुणा फल लाया।'' 9तब उसने कहा, ''जिसके पास सुनने के लिये
कान हों, वह सुन ले।''**

आयत 1. यीशु के दृष्टांतों का इस्तेमाल करने का एक कारण यह हो सकता है कि भीड़ **बड़ी भीड़** हो गई थी। जहां पहले, यीशु को सुनने के लिए द्वार में से आने की कोशिश करने वालों को केवल ''बहुत'' कहा गया (2:2; देखें 2:15), वहीं अब उसके पीछे आने वाली भीड़ इतनी बढ़ गई थी कि **वह झील में एक नाव पर चढ़कर बैठ गया, और सारी भीड़ भूमि पर झील के किनारे खड़ी रही**। बड़ी भीड़ के सुनने और समझने के लिए, विशेषकर उनके लिए

जिन्हें यीशु की शिक्षाओं का पता पहली बार चल रहा था, कहानी आसान होनी थी। यह धार्मिक नियमों को विस्तार से बताने के बजाय अधिक देर तक याद रहनी थी।

साधारण प्रचारकों को उनके पीछे इतनी भीड़ ध्यान से सुनने के लिए आते देखकर प्रसन्नता होगी, परन्तु यीशु को नहीं हुई। उसके दृष्टांत उसके सुनने वालों की समझ को परखने के लिए नहीं थे, जैसे कि वह स्कूल के बच्चों को टैस्ट दे रहा हो, बल्कि उसके सुनने वालों की आत्मिक सहभागिता को दिखाने के लिए थे इससे थोड़ी बहुत दिलचस्पी रखने वालों ने सचमुच में जानकारी लेने वालों से अलग कर देना था। प्रभु का चेला बनने के लिए थोड़ी बहुत दिलचस्पी से बढ़कर होना आवश्यक है (देखें लूका 13:24, 25)। शायद यीशु की ''गुप्त'' कहानियों से उन लोगों से जो आत्मिक मामलों में सचमुच में दिलचस्पी रखते थे, किसी राजनैतिक या सैनिक अगुवे की तलाश करने वालों को, अलग करने में सहायता मिली।

आयत 2. वह उन्हें दृष्टान्तों में बहुत सी बातें सिखाने लगा। यहूदियों के पास ''दृष्टांत'' और ''कहावत'' दोनों के लिए एक ही शब्द था, परन्तु यूनानी शब्दों का अर्थ अधिक स्पष्ट था। ''दृष्टांत'' (παραβολή, *parabolē*) अलंकार है जो ''नमूने या उदाहरण का काम करता है।''[4] बहुत से लोग ''दृष्टांत'' की परिभाषा ''स्वर्गीय अर्थ वाली सांसारिक कहानी'' के रूप में करते हैं। παροιμία (*paroimia*) (पेरोइमिया) जिसका अनुवाद ''नीतिवचन'' हुआ है, किसी भी प्रकार के रूपक का संकेत देता हो सकता है।[5] यह केवल समझदारी की बात (''सार्थक बात, ... *कहावत*''[6]) है जिसे आम तौर पर और तर्कसंगत रूप में स्वीकार किया जाता है (सामान्य नियम हर जगह 100 प्रतिशत लागू नहीं होता, जैसा कि नीतिवचन 22:6 से समझाया गया है)।[7]

यीशु की बातें सरल परन्तु फिर भी गम्भीर होती थीं। वे सुनने वालों के दिलों से उसके दिल की बात होती थीं। उसके दृष्टांत छोटे बच्चों की कहानियों जैसे नहीं थे, बल्कि वे गम्भीर विचार करने के लिए थे। उसने बनावटी हावभाव या लम्बे चौड़े वाक्यांशों का इस्तेमाल नहीं किया बल्कि उसकी हर क्रिया वास्तविक थी। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि उन्होंने कहा, ''किसी मनुष्य ने कभी ऐसी बातें नहीं कीं'' (यूहन्ना 7:46)।

उसकी कुछ बातें, केवल ''आधार'' दृष्टांत ही थे यानी उन विचारों का जिन्हें और विस्तार से बताया जा सकता था, केवल आरम्भ बताते हुए संक्षिप्त कथन ही थे। बालजबूल के विवाद (3:22, 23), बारातियों, पुराने पकड़े पर नये कपड़े का पैवन्द, और पुरानी मशकों में नये दाखरस की चर्चा को इसी श्रेणी में रखा जा सकता है (2:19–22)। अध्याय 4 में पहली बार यीशु ने दृष्टांतों में आरम्भ किया; उनकी व्याख्याएं बाद में चेलों के उसके अंदरूनी दायरे को दी गईं।[8]

दृष्टांत रूपक नहीं हैं जिनकी हर बात की व्याख्या करनी आवश्यक हो। बल्कि दृष्टांत मुख्य विचार को बताता है। जब किसी दृष्टांत का विश्लेषण इस प्रकार से किया जाता है कि उसका अर्थ सब कुछ हो, तो यह सिमटकर कोई अर्थ नहीं देता। बहुत से प्रचारक और उपदेशक किसी दृष्टांत में उससे बढ़कर, जिसके लिए वह दिया गया है, कुछ और ढूंढ़ने की कोशिश करते हुए इसे उलझा देते हैं।[9] सिकंद्रिया के फिलो ने, जो मसीह के जन्म के आस-पास बड़ा हुआ, पूरे पुराने नियम के साथ ऐसा ही किया था, उसने इसे यूनानी विचार के साथ मिलाने की कोशिश की परन्तु उल्टा उसने पवित्र शास्त्र की शिक्षा को बकवास बना दिया। वचन के साथ छेड़ छाड़

करने से ऐसा ही होता है। मसीह ने पुराने नियम के साथ अपने व्यवहार में कभी भी दोषी नहीं होना था। ऐसी बेबुनियाद व्याख्या गलत और तर्कहीन कार्यप्रणाली है। रहस्य ढूंढ़ने के बजाय जबकि उसमें हो न बाइबल की ठोस व्याख्या में सामान्य समझ का इस्तेमाल शामिल होता है।

दृष्टांतों में चाहे तकनीकी विचारों का संकेत हो सकता है, परन्तु यीशु की व्याख्याओं से संकेत मिलता है कि उनका मुख्य उद्देश्य साफ़ साफ़ बातें कहना था। दृष्टांतों का बड़ा फायदा यह है कि ये व्यक्ति को अपने बारे में सोचने को मजबूर कर देते हैं और एक-एक बात समझ में आ जाने पर दिमाग पर छा जाते हैं। कहानी किसी नियम से बेहतर याद रहती है। अधिकतर सुनने वाले दृष्टांत को सुनने के बाद दोहरा सकते हैं। यीशु अपने चेलों को बच्चों की तरह चला रहा था, परन्तु उन्हें आत्मिक रूप में बड़े होना और अपने आप सोचना सीखना आरम्भ करना आवश्यक था। हम पर भी यही बात लागू होती है।

आयतें 3-9. मुख्य दृष्टांत जो मसीह ने दिया वह बीज बोने वाले का दृष्टांत है। यीशु ने यह कहते हुए आरम्भ किया, ''**सुनो!**'' (4:3), और अंत यह कहकर कि ''**जिसके पास सुनने के लिये कान हों, वह सुन ले**'' (4:9)। सम्भवतया मसीह द्वारा किसी ताड़ना का इस्तेमाल इससे बढ़कर नहीं हुआ।[10] प्रकाशितवाक्य में उसने इसे इस प्रकार से कहा: ''जिसके कान हों वह सुन ले कि आत्मा कलीसियाओं से क्या कहता है'' (2:7, 11, 17, 29; 3:6, 13, 22)। क्या ऐसा हो सकता है कि ध्यान से न सुनना सीधे तौर पर क्षमा न किए जा सकने वाले पाप का कारण बन सकता हो ? कइयों ने ऐसा ही सोचा है। दोनों ही बातें सुनने वाले पर सीखने और ध्यान देने की जिम्मेदारी डालती हैं।

''अलग-अलग प्रकार की भूमि का दृष्टांत'' इस वचन के सबसे बढ़िया शीर्षक के रूप में दिखाया गया है, क्योंकि भूमि का गुण ही है जो सुनने वालों के मनों को दर्शाता है और कहानी में मुख्य बात यही है। बीज बोने वाला उसी समय अपने खेत की ओर जा रहा हो सकता है जब यीशु ने यह दृष्टांत कहा। यीशु ने कोई गुप्त बात नहीं कही थी या कोई हैरान कर देने वाला विचार नहीं बताया था, बल्कि उसने आस पास पाई जाने वाली साधारण बातें ही कही थीं। अपने उदाहरणों में उसने ऐसे नियमों या चीज़ों का इस्तेमाल किया जिन्हें कोई बच्चा भी समझ सकता था। वह जानता था कि महानतम सच्चाइयां आम तौर पर स्पष्ट होती हैं और हमारे आस पास ही मिल जाती हैं। संक्षेप में यीशु कह पाया था कि ''यदि तुम साफ़ साफ़ समझाई गई परमेश्वर की सच्चाई को देखने के इच्छुक हो, तो अपने आस पास देखो।'' इस दृष्टांत में उसने कई प्रकार की भूमि की बात की। जब **बोनेवाला बीज बोने निकला** (4:3) तो हर भूमि की प्रतिक्रिया अलग थी।

मार्ग के किनारे वाली भूमि (4:4)। ''**कुछ मार्ग के किनारे गिरा।**'' खेतों को बाड़ लगाकर अलग नहीं किया जाता था, इस कारण जिधर से लोग उनके बीच में से गुज़रते रहते थे वहां मार्ग बन जाते थे। शायद भूमि अच्छी थी, परन्तु पगडंडी बन जाने के कारण कहीं कहीं कठोर हो गई। ऐसी जगहों पर जड़ न पकड़ पाने के कारण वहां गिरा बीज या तो दब गया या **पक्षियों ने आकर उसे चुग लिया**।

पथरीली भूमि (4:5, 6)।''**कुछ पथरीली भूमि पर गिरा।**'' इस्राएल में अधिकतर भूमि पत्थर की पतली परत पर फैली है, जहां जड़ नहीं पकड़ पाती। इस भूमि में पौधे **जल्द** उग आए; परन्तु जब **सूर्य निकला** तो **जल** गए और **सूख** गए।

झाड़ियों वाली भूमि (4:7)। ''**कुछ झाड़ियों में गिरा।**'' इस्राएल में झाड़ियां बहुत हैं। यरूशलेम में जब हम पहली बार गए तो मैंने और मेरी पत्नी डॉरिस ने नगर की दीवार के नीचे एक झाड़ी उगती हुई देखी जिसमें कई इंच लम्बे कांटे थे। हम हैरान थे कि कहीं इसी पौधे के कांटों का मुकुट क्रूस पर यीशु को तो नहीं पहनाया गया था (देखें 15:17)। इनमें से कुछ पौधे तो इतने बड़े हो जाते हैं कि घोड़ा उनके बीच से नहीं जा सकता। सेल्सुस ने इस्राएल में उगने वाले कांटों के पौधो का सोलह अलग-अलग किस्मों का वर्णन किया है।[11] **झाड़ियों ने बढ़कर उसे** [बीज को] **दबा दिया, और वह फल न लाया।**

अच्छी भूमि (4:8)। ''**कुछ अच्छी भूमि पर गिरा।**'' एसड्रिलन के मैदान की तरह कहीं कहीं बहुत अच्छी भूमि है। यीशु स्पष्टतया अपने समय की अच्छी भूमि की उपज की बात कर रहा था। इस भूमि में बीज **उगा और बढ़कर फलवन्त हुआ; और कोई तीस गुणा, कोई साठ गुणा और कोई सौ गुणा फल लाया**।[12] एक बीज से एक सौ दाने निकलना कोई अनोखी बात नहीं होती। मसीह में एक दिवंगत बहन ओडेट फाल्कर ने न्यू मैक्सिको में अपने पिता के खेत की बात बताई जिसकी भूमि इतनी उपजाऊ थी कि उसे उसमें खाद नहीं डालनी पड़ती थी; उसे केवल हर वर्ष थोड़ा गहरा हल चलाना पड़ता था। हमारे जीवनों और परमेश्वर के वचन का अध्ययन करने साथ ही ऐसा होता है, आत्मिक तौर पर बढ़ते रहने के लिए हमें हर वर्ष थोड़ा गहराई से हल चलाना आवश्यक होता है। उत्पत्ति 26:12 बताता है कि इसहाक ने सौ गुणा फसल काटी। यहोवा ने उसे इतना आशीषित किया कि वह धनवान बन गया।

''जिसके ... कान हों'' (4:9) उस पर ध्यान लगाने और उसका अर्थ समझने के लिए सुनने वालों की जिम्मेदारी के सम्बन्ध में जो कुछ यीशु कह रहा था ताड़ना था। हम हैरान हो सकते हैं, ''ऐसा कैसे हो सकता है कि उसके मित्रों को समझ न आए और उसके शत्रु उसके संदेश का अर्थ गलत निकाल लें?'' उत्तर यह है कि मन पर सुसमाचार का असर अपने आप नहीं होता। बताई गई शिक्षा अपरिवर्तनीय है परन्तु इसका असर सुनने वाले के रवैये पर निर्भर है। हम सुसमाचार के प्रचार के असर का दोष बोने वाले (या प्रचारक) पर ही न लगाएं। हर व्यक्ति की जिम्मेदारी है कि इन नियमों को लागू करें; मन की सुस्ती इसके प्रभावी होने में रुकावट बन सकती है।

जंगली बीज के दृष्टांत में, बोने वाला ''मनुष्य का पुत्र'' यीशु है (मत्ती 13:37)। सम्भवतया मरकुस 4:3-9 वाले इस दृष्टांत में ''बोने वाला'' यीशु को ही दर्शाता है।[13] विस्तार से, हम कह सकते हैं कि हर मसीही को यीशु की तरह बोने वाला होना चाहिए। हम में से हर किसी को पूछना चाहिए, ''मेरा मन किस प्रकार की भूमि है?'' मन/भूमि की अलग-अलग किस्में उन सबकों को दिखाती हैं जो बोने वाले/उपदेशक और सुनने वाले दोनों पर लागू होते हैं। लूका 8:18 में यीशु के शब्दों ''इसलिए चौकस रहो कि तुम किस रीति से सुनते हो'' में फिर से सुनने वाले को चेतावनी थी कि किसी सबक में उसकी दिलचस्पी का न होना संदेश देने वाले को दोषी नहीं ठहरा सकता। हम बोने के अपने तरीकों को सुधार सकते हैं (देखें कुलु. 4:6; 1 पतरस 3:15)। हमारा काम परमेश्वर के महिमायुक्त वचन के रूप में इसे देते हुए सुसमाचार को सिखाना और सुनाना और जहां तक हो सके संदेश को व्यावहारिक बनाना है।

बाहर वाले, आज्ञा न मानने को तैयार (4:10–12)[14]

[10]जब वह अकेला रह गया, तो उसके साथियों ने उन बारह समेत उससे इन दृष्टान्तों के विषय में पूछा। [11]उसने उनसे कहा, ''तुम को तो परमेश्वर के राज्य के भेद की समझ दी गई है, परन्तु बाहरवालों के लिये सब बातें दृष्टान्तों में होती हैं। [12]इसलिये कि ''वे देखते हुए देखें और उन्हें सुझाई न पड़े और सुनते हुए सुनें भी और न समझें; ऐसा न हो कि वे फिरें, और क्षमा किए जाएँ।''

आयत 10. जब वह अकेला रह गया, तो उसके साथियों ने उन बारह समेत उससे इन दृष्टान्तों के विषय में पूछा। संजीदा अनुयायी और अस्थिर अनुयायी में गम्भीर अंतर किया गया है। यीशु के साथ बने रहने वालों में प्रेरित और ''उसके आस पास रहने वाले'' (NKJV) लोग थे। यीशु ''अकेला'' (''घर में''; मत्ती 13:36) था क्योंकि उसके प्रेरितों के अलावा भीड़ उसके आस-पास नहीं थी, पर उसके कुछ नज़दीकी चेले अभी भी उसके साथ थे। इस समूह में मत्तियाह, यूसुफ़ बर-सबा (जिसका उप नाम यूसतुस था) और दूसरे ऐसे लोग हो सकते हैं जो यूहन्ना के बपतिस्मा से लेकर प्रभु और प्रेरितों के साथ रहे। इनमें से एक को बाद में यहूदा की पदवी मिली (प्रेरितों 1:21, 22)। इनके जैसे कई और लोग हो सकते हैं, चाहे उन्हें मसीह की मृत्यु से पहले किसी पद के लिए नियुक्त नहीं किया जाता, जो प्रेरितों के साथ लगातार रहे।

आयतें 11, 12. एक समूह को **परमेश्वर के राज्य के भेद की समझ** मिल जानी थी, जबकि कम खोजी मन वाले दूसरों ने और ज्ञान की खोज नहीं करनी थी जिस कारण उन्हें समझ नहीं मिलनी थी। आज बहुत से लापरवाह सुनने वालों को कभी यह पता नहीं चल पाएगा कि गम्भीर अनुयायी को क्या समझ मिल जाएगी।

नये नियम में ''भेद'' (μυστήριον, *mustērion*) किसी ऐसी चीज़ के लिए इस्तेमाल हुआ है जो पहले प्रगट नहीं की गई थी। इसका अर्थ यह नहीं है कि यह कोई ऐसी चीज़ थी जिसे साधारण लोग समझ नहीं सकते थे। उदाहरण के लिए, इफिसियों 3:3–6 में पौलुस ने उस ''भेद'' के बारे में बताया जो उस पर प्रकट हो चुका था। ''मसीह यीशु में सुसमाचार के द्वारा अन्यजातीय लोग मीरास में साझी, और एक ही देह के और प्रतिज्ञा के भागी हैं'' को उसकी पत्री के पाठक समझ सकते थे। इस बात का कोई संकेत नहीं है कि इस समझ तक पहुंचने के लिए पाठकों को किसी अलौकिक प्रेरणा या ज्ञान की आवश्यकता थी। इसलिए नये नियम में ''भेद'' का अर्थ केवल ''ईश्वरीय रूप में प्रकट किया गया [पूर्व] रहस्य।''[15]

पौलुस ने उन अलग-अलग सच्चाइयों को समझाने के लिए जो प्रकाशन के बिना अज्ञात रहनी थी, ''भेद'' शब्द का इस्तेमाल इक्कीस बार किया। उन तथ्यों को छोड़कर जिन्हें परमेश्वर ने अपने अनुग्रह से हमारे ऊपर प्रकट किया है, कई तथ्य हमारे लिए अज्ञात रहने थे। उदाहरण के लिए, उसने अंत समय के कुछ तथ्य हमें बताए हैं:

> देखो, मैं तुम से भेद की बात कहता हूं: हम सब नहीं सोएंगे, परन्तु सब बदल जाएंगे। और यह क्षण भर में, पलक मारते ही अन्तिम तुरही फूंकते ही होगा। क्योंकि तुरही फूंकी जाएगी और मुर्दे अविनाशी दशा में उठाए जाएंगे, और हम बदल जाएंगे (1 कुरि. 15:51, 52)।

अभी हमें भी यह पता नहीं है कि इसके बाद हम कैसे दिखाई देंगे, परन्तु इतना जानते हैं कि यदि हम यीशु के आने तक जीवित रहते हैं, तो उसके आने पर हम तुरन्त बदल जाएंगे। एक और प्रकाशन की बात की जा सकती है कि मसीह के द्वितीय आगमन पर मरे हुए पवित्र लोग जी उठेंगे:

> क्योंकि हम प्रभु के वचन के अनुसार तुम से यह कहते हैं, कि हम जो जीवित हैं, और प्रभु के आने तक बचे रहेंगे तो सोए हुओं से कभी आगे न बढ़ेंगे। क्योंकि प्रभु आप ही स्वर्ग से उतरेगा; उस समय ललकार, और प्रधान दूत का शब्द सुनाई देगा, और परमेश्वर की तुरही फूंकी जाएगी, और जो मसीह में मरे हैं, वे पहिले जी उठेंगे। तब हम जो जीवित और बचे रहेंगे, उन के साथ बादलों पर उठा लिए जाएंगे, कि हवा में प्रभु से मिलें, और इस रीति से हम सदा प्रभु के साथ रहेंगे (1 थिस्स. 4:15-17)।

हम यह तो नहीं जानते कि हमारा प्रभु कब आएगा, परन्तु इतना अवश्य जानते हैं कि जब वह दिन आएगा तब उससे मिलने के लिए धर्मी लोग "उठा लिए जाएंगे।" 1 थिस्सलुनीकियों 4:15 में पौलुस ने कहा कि प्रभु ने उसे यह "वचन" दिया था, यानी यह वह सच्चाई है जिसका उसे यह बताए जाने से पहले पता नहीं था कि मसीह के वापस आने से पहले सभी पवित्र लोग नहीं मरेंगे। थिस्सलुनीके के कुछ मसीहियों ने 1 थिस्सलुनीकियों की बात का यह अर्थ मान लिया कि यीशु जल्द आ रहा है, जिस कारण पौलुस ने 2 थिस्सलुनीकियों में यह समझाने के लिए लिखा कि प्रभु ने तब तक नहीं आना था जब तक पाप का पुरुष न आ जाता (2 थिस्स. 2:1-7)।

यीशु का अपने दृष्टांतों में तीहरा उद्देश्य था। (1) वह परमेश्वर की इच्छा से लोगों में आज्ञापालन में सुधार करने के लिए (2) हर बात को जिसे सीखा जा सकता है सीखने के लिए उत्सुकता पैदा करना चाहता था। वह अपने सुनने वालों के मनों में सच्चाई की और खोज करके इसे अपने जीवनों में जोड़ लेने की उत्तेजना भरना चाहता था। एक और उद्देश्य जिसकी घोषणा वह यहां पर कर रहा था वह (3) उनकी समझ से उन्हें जो आज्ञा मानने को तैयार नहीं थे, दूर रखना था। अपने चेलों के सवाल के अपने जवाब में उसने नकारात्मक उद्देश्य बताया: **"परन्तु बाहरवालों के लिये सब बातें दृष्टान्तों में होती हैं। इसलिये कि वे देखते हुए देखें और उन्हें सुझाई न पड़े और सुनते हुए सुनें भी और न समझें; ऐसा न हो कि वे फिरें, और क्षमा किए जाएँ।"** मरकुस की व्याख्या संक्षिप्त है, परन्तु मत्ती 13:14, 15 में यह थोड़ा विस्तार से है:

> "उनके विषय में यशायाह की यह भविष्यद्वाणी पूरी होती है: 'तुम कानों से तो सुनोगे, पर समझोगे नहीं; और आंखों से तो देखोगे, पर तुम्हें न सूझेगा। क्योंकि इन लोगों का मन मोटा हो गया है, और वे कानों से ऊंचा सुनते हैं और उन्होंने अपनी आंखें मूंद ली हैं; कहीं ऐसा न हो कि वे आंखों से देखें, और कानों से सुनें और मन से समझें, और फिर जाएं, और मैं उन्हें चंगा करूं'" (देखें यशायाह 6:9, 10)

आत्मिक तौर पर अंधे और मन के कठोर लोगों ने आने वाले राज्य की जिसे यीशु ने स्थापित करना था किसी समझ के बिना अंधकार में ही रहना था। उन्हें भविष्य से जुड़ी किसी और बात का अधिक पता नहीं होना था।

यहेजकेल को ऐसे लोगों के पास प्रचार करने के लिए भेजा गया जो पहले ही कठोर चित थे (यीशु के समय के बहुत से लोगों की तरह) और उसके प्रचार से उन्होंने और भी कठोर हो जाना था। परमेश्वर ने उसे इसके लिए यह कहकर तैयार किया, ''परन्तु इस्राएल के घरानेवाले तेरी सुनने से इनकार करेंगे; वे मेरी भी सुनने से इनकार करते हैं; क्योंकि इस्राएल का सारा घराना ढीठ और कठोर मन का है'' (यहेज. 3:7)। उनके लिए परमेश्वर की इच्छा यह नहीं थी; वह उस पिता की तरह था जिसने अपने पुत्र को वापस लाने के लिए इसे छोड़कर हर कोशिश कर ली थी, परन्तु अंत में कह दिया, ''ठीक है, दफ़ा हो जा, और न खत्म होने वाली बर्बादी में छलांग लगा दे!''[16] यीशु को मालूम था कि उसके सामने ऐसी ही परिस्थिति है और उसने इस मामले में यशायाह की लिखी बात को लागू किया। यशायाह और यीशु दोनों ही ऐसे लोगों से बात कर रहे थे जो पूर्वाग्रह और गलत धारणाओं के कारण विरोध की पक्की दीवार की तरह थे (देखें यशा. 6:9, 10; मत्ती 13:10-17)।

इसलिए, 4:12 में यीशु कह रहा था कि कुछ लोगों को सच्चाई को जानने से रोकने के लिए, वह कम से कम कुछ-कुछ उनके साथ दृष्टांतों में बात करता था, क्योंकि वह जानता था कि वे आज्ञा नहीं मानेंगे जिससे उनका उद्धार हो। फिर से, हम खोजी और मजबूरी में काम करने वाले के बीच अंतर को देखते हैं (देखें लूका 13:23, 24)। ऐसे लोग हमेशा होते हैं जिनका मन सच्चाई के लिए खुला होता है, और उसने अपने दृष्टांतों का अर्थ खोलकर बता दिया। दूसरों ने अपने मनों को नहीं खोला और उसने उन्हें भगाने के लिए दृष्टांतों में बातें कीं।

दृष्टांत का अर्थ (4:13-20)[17]

13फिर उसने उनसे कहा, ''क्या तुम यह दृष्टान्त नहीं समझते? तो फिर और सब दृष्टान्तों को कैसे समझोगे? 14बोनेवाला वचन बोता है। 15जो मार्ग के किनारे के हैं जहाँ वचन बोया जाता है, ये वे हैं कि जब उन्होंने सुना, तो शैतान तुरन्त आकर वचन को जो उनमें बोया गया था, उठा ले जाता है। 16वैसे ही जो पथरीली भूमि पर बोए जाते हैं, ये वे हैं जो वचन को सुनकर तुरन्त आनन्द से ग्रहण कर लेते हैं। 17परन्तु अपने भीतर जड़ न रखने के कारण वे थोड़े ही दिनों के लिये रहते हैं; इसके बाद जब वचन के कारण उन पर क्लेश या उपद्रव होता है, तो वे तुरन्त ठोकर खाते हैं। 18जो झाड़ियों में बोए गए ये वे हैं जिन्होंने वचन सुना, 19और संसार की चिन्ता, और धन का धोखा, और अन्य वस्तुओं का लोभ उनमें समाकर वचन को दबा देता है और वह निष्फल रह जाता है। 20और जो अच्छी भूमि में बोए गए, ये वे हैं जो वचन सुनकर ग्रहण करते और फल लाते हैं: कोई तीस गुणा, कोई साठ गुणा और कोई सौ गुणा।''

4:3-8 वाले दृष्टांत का लाभ दोहरा है: (1) यह हमें परमेश्वर के वचन के बोये जाने/प्रचार किए जाने के काम को दिखाता है, और (2) यह इस बात को मान लेता है कि बहुत से लोग नहीं सुनेंगे, ताकि हम इसके लिए तैयार रहें और निराश न हों। 4:13-20 वाला यह भाग बीज बोने और अलग-अलग भूमियों के यीशु के दृष्टांत का अर्थ बताता है। मरकुस के विवरण में जहां बहुवचन का इस्तेमाल है, वहीं मत्ती के समानांतर विवरण में एकवचन है। स्पष्टतया यीशु

ने किसी पूछने वाले से बात करते हुए आरम्भ किया, परन्तु फिर उसने सब सुनने वालों के लिए अपनी चर्चा को बढ़ाया। दोनों ही वचनों में यीशु की बातें मूल अर्थ में हैं। इससे उनके परमेश्वर की प्रेरणा से होने की बात किसी भी प्रकार से कम नहीं होती, क्योंकि उन्हें उद्धारकर्त्ता के विचारों को व्यक्त करने में पवित्र आत्मा की विश्वसनीय और सही अगुआई प्राप्त थी। "प्रेरणा" का अर्थ यह होगा कि हर शब्द को ईश्वरीय अगुआई प्राप्त है, नहीं तो वह किसी हाल में विश्वसनीय प्रेरणा नहीं है (मत्ती 10:19, 20; 1 कुरि. 2:13; 2 तीमु. 3:16, 17)।

आयत 13. बोने वाले के इस दृष्टांत को "सब दृष्टांतों का जनक" माना गया है। यह यीशु के अन्य दृष्टांतों की व्याख्या सही ढंग से करने के लिए आधार बनाता है। 4:13 में यीशु ने समझ न रखने वाले कानों को डांट लगाई: "**क्या तुम यह दृष्टान्त नहीं समझते? तो फिर और सब दृष्टान्तों को कैसे समझोगे?**" एक अर्थ में वह यह कह रहा था, "तुम इन साधारण सी बातों को नहीं समझते, इसका मतलब है कि तुम उन गहरी बातों को नहीं समझ पाओगे, जो मैं तुम्हें बताने वाला हूं।" हमारे लिए दृष्टांत आसान है परन्तु पहली बार सुनने वालों के लिए जो यीशु के सिखाने के इस ढंग से अनजान थे, यह कठिन था। चेलों को समझ कम आती थी परन्तु वे जानने को उत्सुक थे। यीशु ने अपने पाठ को उनके लिए समझाना था।

आयत 14. "बोनेवाला वचन बोता है।" लूका 8:11 समझाता है कि "बीज" "परमेश्वर के वचन" के जैसा है। यीशु के इस दृष्टांत को आगे समझाते हुए अलग-अलग प्रकार की भूमि को लोगों के मनों से जोड़ा। उसने चार प्रकार के मनों का वर्णन किया।

आयत 15. *कठोर मन।* "**जो मार्ग के किनारे के हैं जहाँ वचन बोया जाता है, ये वे हैं।**" यह "मार्ग के किनारे" है। यह अच्छी भूमि हो सकती है परन्तु लोगों के आने जाने से कठोर हो गई। यह मार्ग उस सुन्न हुए मन को दर्शाता है जो समझने के अयोग्य हो गया है; जब "वचन बोया जाता है" तो इसे मन को मुलायम करने और प्रभावी होने से रोक दिया जाता है।

"**जब उन्होंने सुना, तो शैतान तुरन्त आ**" गया। बीज या **वचन** को शैतान की गतिविधि से उठा लिया जाता है। शैतान जिसके लिए इस आयत में कहा गया है कि वह "तुरन्त आकर" सुनने वालों के इस वर्ग को हर प्रकार का प्रलोभन देकर खींचने का काम करता है। उसके तरीकों ने बहुतों के मन अंधे कर दिए है (2 कुरि. 4:3), परन्तु वह केवल "अविश्वासी मनों" को अंधा कर सकता है, ताकि सुसमाचार का उनके लिए कोई आकर्षण न हो।

शैतान सचमुच में "इस संसार का ईश्वर" है (2 कुरि. 4:4), जो कि वह नहीं रहेगा जब उसे और उसके दूतों को आग में डाल दिया जाएगा (मत्ती 25:41)। सुसमाचार को सुनकर और नकारने से व्यक्ति और कठोर हो जाता है और इसे कम ग्रहण करने वाला बन जाता है। जिन लोगों के पूर्वाग्रह उन्हें सुसमाचार को देखने नहीं देते, वे इसी श्रेणी में आते हैं। अपने मन को हर प्रकार के बुरे प्रभाव के लिए खोल देने वाला व्यक्ति ऐसे परिणामों को भोगेगा।

आयतें 16, 17. *पथरीला मन।* "**जो पथरीली भूमि पर बोए जाते हैं, ये वे हैं जो वचन को सुनकर तुरन्त आनन्द से ग्रहण कर लेते हैं।**" सतही भूमि का यह रूपक उस व्यक्ति को दर्शाता है जिसमें थोड़ी देर के लिए जोश होता है, परन्तु परेशानी आने पर उसका जोश ठण्डा पड़ जाता है और उसका आनन्द गायब हो जाता है। ऐसा व्यक्ति मनमौजी सोच वाला है क्योंकि उसके अंदर आश्वासन की झूठी भावनाएं थोड़ी देर के लिए उठ सकती हैं।[18] बाइबल में "मन"

उसके लिए बनाया गया शब्द है जिसे हम ''दिल'' भी कह सकते हैं। ''मन'' तो ''सबसे अधिक धोखा देने वाला होता है'' (यिर्म. 17:9), जिसका मतलब यह होता है कि मनुष्य की भावनाएं गुमराह करने वाली हो सकती हैं। उदाहरण के लिए इस ''भावना'' का कोई अर्थ नहीं है कि किसी का उद्धार हो गया है, यदि उसने पापों की क्षमा पाने के लिए परमेश्वर के वचन की आज्ञा नहीं मानी है।

पथरीले मन के लिए, यीशु ने कहा, ''**अपने भीतर जड़ न रखने के कारण वे थोड़े ही दिनों के लिये रहते हैं।**'' मिट्टी की कमी वाले ऐसे व्यक्ति को देखना दु:खद है। किसी उत्तेजना से भरे नये-नये मसीही को देखना ऐसी स्थिति का हमारा ज्ञान कई बार हमें डरा सकता है। जिन लोगों की बात यीशु ने की, उन्होंने संदेश को ''तुरन्त'' और ''आनन्द से'' ग्रहण किया यानी उनमें जोश बहुत था। हमारी प्रार्थना है कि मसीह में ऐसे बालक बाइबल पर विश्वास रखने वाले योग्य शिक्षकों के साथ वचन में बढ़ने के लिए विवश हो सकें। वे उन लोगों की तरह चंचल हो सकते हैं जो यीशु के विजयी प्रवेश के समय ''होशाना'' चिल्ला रहे थे (मत्ती 21:4-10), जो तब जल्द ही भाग गए थे। इसी तरह उनमें से जो ''उसे क्रूस दो!'' चिल्ला रहे थे, कुछ लोगों ने विजयी प्रवेश के समय उसकी जय जयकार की थी।[19]

चंचल लोग चेलों में से सबसे बुरे होते हैं; उनका सतही होना और भी गहरा और चौड़ा हो सकता था यदि वे यीशु में और आत्मिक तौर पर बढ़ते। यीशु ने हमें बताया कि यदि हम उसके वचन ''में बने'' रहें तो हम सचमुच में उसके चेले हैं (यूहन्ना 8:31; ASV)। आसानी से निराश हो जाने वालों के लिए विश्वासी होने की गहराई तक पहुंच पाना कठिन होता है। इन लोगों को धीरज रखने की आवश्यकता है। कई बार ऐसा व्यवहार दु:ख सहने से बनता है। रोमियों 5:3 कहता है, ''हम क्लेशों में भी घमण्ड करें, यह जानकर कि क्लेश से धीरज'' होता है। इब्रानियों 12:5-10 भी इसी सच्चाई को बताता है:

> ''हे मेरे पुत्र, प्रभु की ताड़ना को हलकी बात न जान, और जब वह तुझे घुड़के तो साहस न छोड़। क्योंकि प्रभु, जिससे प्रेम करता है, उसकी ताड़ना भी करता है। और जिसे पुत्र बना लेता है, उसको कोड़े भी लगाता है।''[20] तुम दु:ख को ताड़ना समझकर सह लो: परमेश्वर तुम्हें पुत्र जानकर तुम्हारे साथ बर्ताव करता है, वह कौन सा पुत्र है, जिसकी ताड़ना पिता नहीं करता। यदि वह ताड़ना जिसके भागी सब होते हैं, तुम्हारी नहीं हुई, तो तुम पुत्र नहीं, पर व्यभिचार की सन्तान ठहरे! फिर जब कि हमारे शारीरिक पिता भी हमारी ताड़ना किया करते थे, और हमने उनका आदर किया तो क्या आत्माओं के पिता के और भी अधीन न रहें जिससे हम जीवित रहें। वे तो अपनी अपनी समझ के अनुसार थोड़े दिनों के लिए ताड़ना करते थे, पर वह तो हमारे लाभ के लिए करता है, कि हम भी उसकी पवित्रता के भागी हो जाएं।

जब वचन के कारण उन पर क्लेश या उपद्रव होता है, जो अनुशासित नहीं होते हैं **तो** वे **तुरन्त ठोकर खाते हैं**। ''ठोकर खाते'' यूनानी शब्द σκανδαλίζω (*skandalizō*) का अनुवाद है जो फंदे या किसी के रास्ते में रखे ठोकर[21] की तस्वीर दिखाता है। जिसका मन पथरीली भूमि के जैसा हो, उसमें इस स्थिति का कुछ करने की योग्यता तो होती है, परन्तु वह

करता नहीं है। एक सुसमाचार प्रचारक ने कहा कि ऐसे व्यक्ति को मसीह के लिए जीतने के लिए केवल 5 प्रतिशत ऊर्जा चाहिए होती है, परन्तु उसे मसीह में बनाए रखने और आत्मिक रूप में बढ़ाने के लिए किसी टीचर की 95 प्रतिशत ऊर्जा चाहिए।

संयोग से ''एक बार उद्धार हो गया, तो सदा के लिए हो गया'' के विचार को मसीह के इन शब्दों से फटकार पड़ती है। यह कहना सही नहीं है कि ये लोग कभी बदले नहीं थे, जैसा कि बहुत से लोग करते हैं; बल्कि वे मसीह के इतनी देर तक समर्पित नहीं रहे कि वे परिपक्व पवित्र लोग बन सकें।

आयतें 18, 19. *घिरा हुआ मन।* **''जो झाड़ियों में बोए गए ये वे हैं।''** ऐसी स्थिति वाले मन के लोग झाड़ियों वाली भूमि की तरह हैं। उन्होंने बेशक **वचन सुना**, पर वे **संसार की चिंता** से पहले ही घिरे हुए थे। ऐसे लोग जिनका कभी पूरी तरह से मन फिराव नहीं हुआ और वे संसार की चिंताओं पर काबू पा पाते। बहुत करके यह **अन्य वस्तुओं के** अत्यधिक **लोभ** के साथ-साथ लालसाओं और **धन का धोखा** के कारण होता है। दौलत को पाने के उत्सुक लोग आम तौर पर सम्पत्तियों की चिंताओं से भरे होते जिनसे उन्हें बहुत प्रेम होता है। ये चिंताएं परमेश्वर और उसके वचन की बातें उनके मन से निकाल देते हैं।

घिरे हुए, झाड़ियों वाले मन वाले लोग, उस मूर्ख की तरह जिसे मालूम है कि उसके साथ उल्टा ही होता है पर वह परिवार का किराना लाने के लिए रखे पैसों को जुए में बर्बाद करता रहता है, ऐसे लोग रौब, ताकत, दौलत और सुख की तमन्ना करते हैं। अन्य शब्दों में उन चीज़ों की जो इस संसार के लिए कीमती हैं। ऐसी सब चीज़ें व्यर्थ हो जाएंगी। यूहन्ना ने लिखा:

> क्योंकि जो कुछ संसार में है, अर्थात शरीर की अभिलाषा, और आंखों की अभिलाषा और जीविका का घमण्ड, वह पिता की ओर से नहीं, परन्तु संसार ही की ओर से है।संसार और उसकी अभिलाषाएं दोनों मिटते जाते हैं, पर जो परमेश्वर की इच्छा पर चलता है, वह सर्वदा बना रहेगा (1 यूहन्ना 2:16, 17)।

शैतान को इन लोगों में से ''वचन'' को निकालने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि अपने मनों में वे पहले से ही दोषी हैं। बेशक शैतान अभी भी ऐसी सांसारिक इच्छाओं को देने वाला है। वह परमेश्वर के संदेश को उसी के मन से निकाल सकता है जो इसे निकलवाने के लिए तैयार हो। इसका अर्थ यह हुआ कि कोई चेला, चाहे वह बदल गया हो, फिर भी छोड़ कर जा सकता है। मसीही लोग बहुत बार शैतान की चालाकियों के खतरे के सामने प्रार्थना नहीं कर पाते; हमें लग सकता है कि हम अपने अपने प्रयासों में, अकेले सफल हो सकते हैं। परन्तु यीशु को भी ईश्वरीय सहायता की आवश्यकता पड़ी। उसे स्वर्गदूतों को बुलाना पड़ा था ताकि भूख और शैतान के साथ उसके युद्ध के बाद उसे फिर से बल मिल सके (मत्ती 4:1-11)।

बहुत से धार्मिक गुट दावा करते हैं कि परमेश्वर का प्रेम इतना बड़ा है कि यह शैतान और हमारी अंदरूनी कमज़ोरियों पर हावी हो जाता है ताकि हम धोखे में न आएं जिससे पाप में फिर से पड़ जाएं। दु:ख की बात है, यह लोगों के साथ ऐसा रोज़ होता है। नया नियम परमेश्वर के बजाय मनुष्यों की (मत्ती 6:1), ''झूठे भविष्यद्वक्ताओं'' की (मत्ती 7:15), ''लोगों'' की (मत्ती 10:17), बुरे प्रभावों की (''खमीर''; मत्ती 16:6, 11[22]), ''लोभ'' की (लूका 12:15), और

''बुरे काम करने वालों'' और झूठे गुरुओं की (फिलि. 3:2) स्वीकृति चाहने से ''सावधान'' रहने की बार-बार चेतावनियां देता है। यदि कोई खतरा है ही नहीं तो इतनी चेतावनियां क्यों दी गई हैं ?

भरे हुए मन आज कलीसिया में व्याप्त हो सकते हैं क्योंकि मसीही लोग खतरे से अनजान हैं। बहुत से लोग परमेश्वर के वचन पर मनन के लिए समय नहीं देते, जिससे उनकी उन्नति हो सके। हम से गुहार की गई है, ''नये जन्मे हुए बच्चों के समान निर्मल आत्मिक दूध की लालसा करो, ताकि उसके द्वारा उद्धार की ओर बढ़ते जाओ'' (1 पतरस 2:2; ASV)। परन्तु झाड़ियों वाली भूमि जैसे मन के लोग एक ही समय में तंग मार्ग और चौड़े मार्ग में भी चलने की कोशिश करते हैं, जो कि असम्भव है (देखें मत्ती 7:13, 14)।

यीशु द्वारा अपने दृष्टांतों के माध्यम से दिए गए सबक उन लोगों की ओर से, जो अभी भी शैतान और उसकी चालाकियों से डरते हैं, घर की छतों से साफ़ और स्पष्ट भाषा में ज़ोर शोर से सुनाए जाने चाहिए। धन और सम्पत्ति की इच्छा प्रबल है। धन कमाने की योजनाएं बेशुमार हैं परन्तु आम तौर पर उनसे बड़ी हानि होती है। कठिन परिश्रम, मितव्ययी जीवन, पैसा बचाना और प्रभु के काम के लिए देना किसी भी अन्य आर्थिक योजना से अधिक लाभ देगा। हमें स्वर्ग में अपना धन इकट्ठा करना आवश्यक है, जहां न तो उसे चोरी किया जा सकता है, न कीड़ा लगता और न काई लगती है (मत्ती 6:19, 20)।

धन और उसके प्रेम से बढ़कर खतरनाक और कोई चीज़ नहीं हो सकती, क्योंकि ''दूसरी चीज़ों की लालसाएं'' भी **समाकर वचन को दबा देती हैं और वह निष्फल रह जाता है**। संसार में जो सबसे बड़ी त्रासदी देखने को मिलती है वह कलीसिया के मनों में शिक्षा की मिलावट का चुपके से आकर परमेश्वर की सच्चाई को निकाल देना है। यदि हम परमेश्वर के वचन का और पूरे वचन का प्रचार करते हैं तो हमारे भाई वचन से प्रेम करेंगे और वे इसे अपने मन से नहीं निकलने देंगे।

आयत 20. *उपजाऊ मन।* **''जो अच्छी भूमि में बोए गए, ये वे हैं।''** सुनने वालों के बिना जिनके मन उपजाऊ हों, संसार के सब विश्वासी उपदेशकों को कुछ हासिल नहीं होगा। इस विवरण के साथ मेल खाने वाला व्यक्ति सुसमाचार की पूरी सामर्थ को मान लेता है, पूरी तरह से मन फिराता है और बुरी इच्छाओं को निकालने के लिए काम करता है। वह शैतान को उसे सुनाए संदेश को चुराने नहीं देता, क्योंकि यह उसके मन में गहराई से बस गया है। वह पाप में बना नहीं रहता है और जो उसके अंदर बोया गया है उसे निकलने नहीं देगा। 1 यूहन्ना 3:9 में ऐसे ही चेले की बात की गई है: ''जो कोई परमेश्वर से जन्मा है वह पाप नहीं करता; क्योंकि उसका बीज उसमें बना रहता है: और वह पाप कर ही नहीं सकता, क्योंकि परमेश्वर से जन्मा है।'' यानी मसीही व्यक्ति ''पाप करता'' नहीं रहता (NIV)।

''जो वचन सुनकर ग्रहण करते और फल लाते हैं: कोई तीस गुणा, कोई साठ गुणा और कोई सौ गुणा।'' ''बीज परमेश्वर का वचन है'' जैसा कि लूका 8:11 में साफ़ कहा गया है। उपजाऊ मन वाला व्यक्ति परमेश्वर के वचन को समझकर उसे पकड़े रखता है। लूका 8:15 इसे इस प्रकार से कहता है, ''पर अच्छी भूमि में के वे हैं, जो वचन सुनकर भले और उत्तम मन में सम्भाले रहते हैं, और धीरज से फल लाते हैं।''

किसी ऐसे व्यक्ति को मिलना जो मसीह के लिए संग्राम में कभी डोलता न हो, बल्कि भलाई के लिए दूसरों को प्रभावित करने के लिए बढ़ता जा रहा हो, उन्हें उद्धारकर्त्ता के पास लेकर ही जाता हो, कितना उम्मीद बढ़ाने वाला है! यह व्यक्ति दूसरों को बड़ी संख्या में मसीह के पास लेकर आता है। तरबूज़ का एक बीज बोये जाने और उससे एक सौ तरबूज़ मिलने की कल्पना करें! हमें दृष्टांतों के साथ सावधान रहना आवश्यक है। यहां पर बताई गई चार प्रकार की भूमि में से तीन प्रकार की भूमि बेकार मनों को दर्शाती है, पर हमें इसे वास्तविक परिस्थिति के रूप में नहीं देखना चाहिए। यदि चार में से केवल एक मनपरिवर्तन करने वाला व्यक्ति वफ़ादार रहे तो यह सचमुच में एक बुरा प्रतिशत होगा।

दीये का दृष्टांत (4:21–25)[23]

[21]उसने उनसे कहा, ''क्या दीये को इसलिये लाते हैं कि पैमाने या खाट के नीचे रखा जाए? क्या इसलिये नहीं कि दीवट पर रखा जाए? [22]क्योंकि कोई वस्तु छिपी नहीं, परन्तु इसलिये है कि प्रगट हो जाए; और न कुछ गुप्त है, पर इसलिये है कि प्रगट हो जाए। [23]यदि किसी के सुनने के कान हों, तो वह सुन ले।'' [24]फिर उसने उनसे कहा, ''चौकस रहो कि क्या सुनते हो। जिस नाप से तुम नापते हो उसी से तुम्हारे लिये भी नापा जाएगा, और तुम को अधिक दिया जाएगा। [25]क्योंकि जिसके पास है, उसको दिया जाएगा; और जिसके पास नहीं है, उससे वह भी जो उसके पास है, ले लिया जाएगा।''

जब यीशु ने दृष्टांतों में बातें करना आरम्भ किया, तो उसके सुनने वाले चकित हुए होंगे, ''क या वह अपने उपदेश को छिपाने की कोशिश नहीं कर रहा?'' दीये वाला दृष्टांत यह दिखाता है कि ऐसा नहीं है, क्योंकि जब दृष्टांतों की समझ आ जाती है, तो उससे सुनने वालों को और स्पष्ट हो जाता है। दृष्टांतों में सच केवल थोड़ी देर के लिए छिपा हुआ है, और फिर केवल अविवेकी व्यक्ति के लिए छिपा रहता है।

आयतें 21, 22. उनसे सम्भवतया दूसरे चेलों साथ जो उसके पीछे पीछे रहते थे, 4:10 में यीशु से प्रश्न करने वाला उसी समूह के लिए कहा गया है। यीशु ने उनसे कहा, ''**क्या दीये को इसलिये लाते हैं कि पैमाने या खाट के नीचे रखा जाए? क्या इसलिये नहीं कि दीवट पर रखा जाए?**'' वह ''अच्छे मनों'' अर्थात उन लोगों का महत्व बता रहा था, जो दीये की तरह चमकते हैं और साधारण ढंग से सच्चाई को सामने लाते हैं। उसने ऐसे ''दीये'' को छिपाना नहीं था, और न ही हमें छिपाना चाहिए। सुसमाचार का स्वभाव रौशनी लाना और हर किसी को सच्चाई से अवगत कराना है। यदि सच को गुमनामी में (खाट के नीचे दीये की तरह) रखा जाता है तो यह अपेक्षित परिणाम नहीं देगा। आज्ञाकारी विश्वास वाले हर व्यक्ति को चमकना आवश्यक है, नहीं तो वह हमारे स्वर्गीय पिता की महिमा नहीं कर रहा है (मत्ती 5:16)। इसी प्रकार से हमारा विश्वास साफ़-साफ़ दिखाई देना चाहिए, नहीं तो मसीह के लिए इसका कोई असर नहीं है। हमें सुसमाचार (ज्योति) के अपने ज्ञान को अपने द्वारा चमकाना आवश्यक है, नहीं तो मसीही के रूप में हम नाकाम हैं और निश्चय ही दूसरों को मसीह की ओर खींचने के प्रयास में असफल होंगे।

''**क्योंकि कोई वस्तु छिपी नहीं, परन्तु इसलिये है कि प्रगट हो जाए; और न कुछ गुप्त है, पर इसलिये है कि प्रगट हो जाए।**'' यीशु की यह शिक्षा फरीसियों और शास्त्रियों से बिल्कुल उल्ट होगी, जो अपनी वास्तविक शिक्षा या व्यवहार को ''मानवीय परम्पराओं के बड़े बोझ'' के नीचे छिपा रखते थे।[24] उनके काम बिल्कुल कपट से भरे हुए थे। मत्ती 6:1-18 से पता चलता है कि फरीसियों के विपरीत, यीशु के अनुयायियों के लिए कितने धर्मी होना आवश्यक था। मत्ती 23 में आम लोगों तथा अपने चेलों के बीच यीशु का तीखा संदेश है। सम्भवतया फरीसियों का पाप इससे पहली बार आम लोगों के बीच दिखाया गया।[25]

आयत 23. यीशु ने परमेश्वर के वचन की बात की, जिसे लोग समझ सकते हैं यदि उनके **सुनने के कान हों**। समझने की जिम्मेदारी परमेश्वर से हमेशा सुनने वाले पर डाली गई है। बाइबल में ऐसा कोई संकेत नहीं है कि सुनने वाले को समझाने के लिए ''जागृत'' करने का फर्ज आत्मा का है।[26] लोग अक्सर कहते हैं, ''परमेश्वर से मुझ से यह करवाया'' या ''परमेश्वर ने मेरे मन में यह डाला,'' परन्तु किसी भी प्रकार से साबित नहीं किया जा सकता कि परमेश्वर ने उनसे ''बात की'' पर कोई वास्तविक शब्द नहीं बोला गया।[27] यह जानने का कि परमेश्वर हम से क्या चाहता है, एकमात्र तरीका बाइबल को पढ़ना है।

आयतें 24, 25. यीशु ने कहा, ''**चौकस रहो कि क्या सुनते हो।**'' हमें चुगलियां नहीं सुननी चाहिए; हमें केवल उस सच्चाई को सुनने की इच्छा करनी चाहिए जो साबित हो चुकी है या जिसे आसानी से साबित किया जा सके। हमारा फर्ज केवल सच्चाई को ध्यान से सुनकर मानना है। जितना कोई सच्चाई को जानने का इच्छुक होगा, उतना ही उसके लिए अनन्तकाल की तैयारी करना आसान होगा। यह नियम जीवन और अंतिम न्याय के लिए लागू होता है, जैसा कि मत्ती 25:1-13 में दस कुंवारियों के द्वारा समझाया गया है।

''**जिस नाप से तुम नापते हो उसी से तुम्हारे लिये भी नापा जाएगा, और तुम को अधिक दिया जाएगा।**'' यदि हम यीशु की हर बात को पूरी तरह से सुनते हैं, तो वह हमें और भी अधिक लौटाएगा (लूका 6:38)। जीवन के हर सम्बन्ध में यही बात लागू होती है। और सच्चाई को जानने के लिए सच्चाई के द्वारा स्वतन्त्र होने के लिए और सचमुच में उसके चेले बनने के लिए, हमें वचन में बने रहना आवश्यक है। सच्चाई को जानने का जो हमें स्वतन्त्र करती है केवल यही एक तरीका है (यूहन्ना 8:31, 32)। यदि हम उसका जो हमारे पास है, इस्तेमाल नहीं करते हैं तो हम उसे भी खो देंगे, परन्तु तोड़े का इस्तेमाल करना इसे बढ़ा देगा (मरकुस 4:25)।

''**क्योंकि जिसके पास है, उसको दिया जाएगा; और जिसके पास नहीं है, उससे वह भी जो उसके पास है, ले लिया जाएगा।**'' क्या ऐसा हुआ है कि आपने कोई भाषा सीखी हो और फिर उसका इस्तेमाल न कर पाएं हों? मैंने कलीसिया के कुछ लोगों के नाम सीखे और तीन महीने बाद वे मुझे याद नहीं रहे, क्योंकि कई हफ्ते तक मैंने उनमें से किसी नाम को दोहराया नहीं। लूका 8:18 कहता है कि ''जिसे वह अपना समझता है'' वह उससे ले लिया जाएगा। परमेश्वर बहुतायत से देने वाले को आशीष देता रहता है। 2 कुरिन्थियों 9:6-9 में पौलुस ने लिखा:

> परन्तु बात तो यह है, कि जो थोड़ा बोता है वह थोड़ा काटेगा भी; और जो बहुत बोता है, वह बहुत काटेगा। हर एक जन जैसा मन में ठाने वैसा ही दान करे; न कुढ़ कुढ़ के,

और न दबाव से, क्योंकि परमेश्वर हर्ष से देनेवाले से प्रेम रखता है। और परमेश्वर सब प्रकार का अनुग्रह तुम्हें बहुतायत से दे सकता है जिस से हर बात में और हर, समय, सब कुछ, जो तुम्हें आवश्यक हो, तुम्हारे पास रहे, और हर एक भले काम के लिए तुम्हारे पास बहुत कुछ हो। जैसा लिखा है, उस ने बिथराया, उस ने कंगालों को दान दिया, उसका धर्म सदा बना रहेगा (देखें भजन 112:9)।

परमेश्वर "उसके अनुग्रह के धन के अनुसार" आशीष देता है (इफिसियों 1:7)। वह "अनुग्रह पर अनुग्रह" देता है ("अनुग्रह के लिए अनुग्रह"; यूहन्ना 1:16; NKJV)। वह केवल क्षमा नहीं करता, बल्कि बहुतायत से ऐसा करता है।

दुष्ट अपनी चालचलन और अनर्थकारी अपने सोच विचार छोड़कर यहोवा ही की ओर फिरे, वह उस पर दया करेगा, वह हमारे परमेश्वर की ओर फिरे और वह पूरी रीति से उसको क्षमा करेगा (यशायाह 55:7)।

2 पतरस 1:10, 11 में हम पढ़ते हैं,

इस कारण हे भाइयो, अपने बुलाए जाने, और चुन लिए जाने को सिद्ध करने का भाली भांति यत्न करते जाओ, क्योंकि यदि ऐसा करोगे, तो कभी भी ठोकर न खाओगे। वरन इस रीति से तुम हमारे प्रभु और उद्धारकर्त्ता यीशु मसीह के अनन्त राज्य में बड़े आदर के साथ प्रवेश करने पाओगे।

"वह पापी को केवल क्षमा नहीं करता जैसे कोई हाकिम क्षमा दे सकता है। बल्कि इसके अलावा वह उसे गोद ले लेता है और उसे अपनी शांति, पवित्रता, आनन्द, आश्वासन, पहुंच की छूट, अति-अजेयता" देता है[28] (देखें रोमियों 5-8)। परमेश्वर के साथ रुके रहना असम्भव है; परन्तु या तो हम आगे को जाते हैं या पीछे, यानी या तो हम हासिल करते हैं या खोते हैं। या तो हम अपने "तोड़े" को बढ़ाते हैं या फिर इसे खो देते हैं (मत्ती 25:14-30)। यदि हम उसे जो हमारे पास है, इस्तेमाल में नहीं लाते, तो यह हम से ले लिया जाएगा।

उगते बीज का दृष्टांत (4:26-29)

[26]फिर उसने कहा, "परमेश्वर का राज्य ऐसा है, जैसे कोई मनुष्य भूमि पर बीज छींटे, [27]और रात को सोए और दिन को जागे, और वह बीज ऐसे उगे और बढ़े कि वह न जाने। [28]पृथ्वी आप से आप फल लाती है, पहले अंकुर, तब बाल, और तब बालों में तैयार दाना। [29]परन्तु जब दाना पक जाता है, तब वह तुरन्त हँसिया लगाता है, क्योंकि कटनी आ पहुँची है।"

आयतें 26, 27. साफ है कि यीशु अब फिर से भीड़ के साथ बात कर रहा था।[29] उसके उपदेश का विषय **परमेश्वर का राज्य** है, जिसमें ऐसा कोई संकेत नहीं है कि उसने यहूदियों द्वारा उसके संदेश को ठुकरा देने पर इसकी स्थापना को टाल देना था। मरकुस 9:1 बताता है कि राज्य थोड़ी देर के बाद आने वाला था और समय की इस बात के विरोध में पवित्र शास्त्र में बाद

में कोई अस्वीकृति नहीं है।[30]

यीशु ने कहा कि राज्य **ऐसा है, जैसे कोई मनुष्य भूमि पर बीज छींटे**। पौधों के उगने की कुछ आवश्यक बातों को हम जानते हैं (बीज, प्रकाश, वर्षा, जुताई); परन्तु फिर भी हमारी समझ से बाहर है, वास्तव में यह ''कैसे'' उगता है। एक वैज्ञानिक वैसी ही रसायनिक क्रियाओं का इस्तेमाल करते हुए कुछ ऐसा बना सकता है जो बीज के जैसा दिखता हो; परन्तु इसके अंदर जीवन नहीं होगा। यदि इसे बो दिया जाए, तो यह उगेगा नहीं। फिर भी कोई यह समझा नहीं सकता है कि बीज अंकुरित होकर बढ़ता कैसे है; केवल परमेश्वर बता सकता है, क्योंकि वही बीज में जीवन डालता है। किसान के लिए बोना आवश्यक है; तब **रात को सोए और दिन को जागे, और वह बीज ऐसे उगे और बढ़े कि वह न जाने**। वह यह अद्‌भुत काम करना परमेश्वर पर छोड़ देता है!

पौधे का बीज स्वाभाविक रूप में परमेश्वर के बीज, यानी उसके वचन के साथ मेल खाता है। परमेश्वर के वचन अर्थात शुभ समाचार (हमारे द्वारा बोला गया) की सामर्थ के कारण आत्मिक जीवन अस्तित्व में आता है (देखें रोमियों 1:16)। हमारे लिए हल चलाना, बोना, जुताई करना और काटना आवश्यक है; परन्तु लोगों को बदलने के अपेक्षित परिणाम लाने में हम अभी भी असहाय हैं। हम परमेश्वर के साथ काम करने वाले कर्मचारी हैं, जैसा कि 1 कुरिन्थियों 3:6 में पौलुस ने कहा: ''मैंने लगाया, अपुल्लोस ने सींचा, परन्तु परमेश्वर ने बढ़ाया।'' कोई दावा नहीं किया जा रहा कि उद्धार की प्रक्रिया में सहायता के लिए मनुष्य अयोग्य है क्योंकि हमारे अंदर धन अर्थात सुसमाचार है। 2 कुरिन्थियों 4:7 में हम पढ़ते हैं, ''परन्तु हमारे पास यह धन मिट्टी के बरतनों में रखा है, कि यह असीम सामर्थ हमारी ओर से नहीं, बरन परमेश्वर की ओर से ठहरे।'' निश्चय ही बिना परमेश्वर की आशीष के हम कुछ भी नहीं कर सकते हैं, परन्तु हमें उस सामर्थ को जो बीज/सुसमाचार में है, इस्तेमाल में लाना आवश्यक है।

जीवन का फल देने के लिए बीज के लिए ''मरना'' आवश्यक है। यीशु ने अपनी मृत्यु को जीवन देने के लिए बीज के मरने के साथ मिलाया। हमें भी वही जीवन देने के लिए अपने आपको तैयार रहना आवश्यक है। यूहन्ना 12:24-26 साफ़-साफ़ कहता है:

> ''मैं तुम से सच सच कहता हूँ कि जब तक गेहूँ का दाना भूमि में पड़कर मर नहीं जाता, वह अकेला रहता है; परन्तु जब मर जाता है, तो बहुत फल लाता है। जो अपने प्राण को प्रिय जानता है, वह उसे खो देता है; और जो इस जगत में अपने प्राण को अप्रिय जानता है, वह अनन्त जीवन के लिये उस की रक्षा करेगा। यदि कोई मेरी सेवा करे, तो मेरे पीछे हो ले; और जहाँ मैं हूँ, वहाँ मेरा सेवक भी होगा। यदि कोई मेरी सेवा करे, तो पिता उसका आदर करेगा।''

यह यह नहीं बताता है कि नया जन्म रहस्यमइयी है। हो सकता है कि हमें यह पता न हो कि वचन किसी को कैसे बचाता और नया जीवन देता है, परन्तु हम यह जानते हैं कि यह ऐसा करता है!

आयत 28. ''पृथ्वी आप से आप फल लाती है।'' ''आप से आप'' αὐτόματος (*automatos*) से लिया गया है जिससे ''आटोमैटिक'' शब्द निकला है। इसका अर्थ

''बिल्कुल अपने आप'' है।[31] क्या इसका अर्थ यह हो सकता है कि किसी खोए हुए को बदलने की शक्ति परमेश्वर के वचन में अपने आप में है? ''आत्मा की तलवार, जो परमेश्वर का वचन है'' (इफिसियों 6:17), पवित्र आत्मा के द्वारा पापियों को निरुत्तर करके मन फिराव करवाने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला हथियार है। इब्रानियों 4:12 इसे इस प्रकार से कहता है: ''क्योंकि परमेश्वर का वचन जीवित, और प्रबल, और हर एक दोधारी तलवार से भी बहुत चोखा ह ...।''

प्रेरितों 2:36 कहता है, ''अत: अब इस्राएल का सारा घराना निश्चित रूप से जान ले कि परमेश्वर ने उसी यीशु को जिसे तुम ने क्रूस पर चढ़ाया, प्रभु भी ठहराया और मसीह भी।'' इसका जवाब यह मिला:

> तब सुननेवालों के हृदय छिद गए, और वे पतरस और शेष प्रेरितों से पूछने लगे, ''हे भाइयो, हम क्या करें?'' पतरस ने उनसे कहा, ''मन फिराओ, और तुम में से हर एक अपने अपने पापों की क्षमा के लिये यीशु मसीह के नाम से बपतिस्मा ले; तो तुम पवित्र आत्मा का दान पाओगे (प्रेरितों 2:37, 38)।

दूसरे शब्दों में, यीशु की मृत्यु में उनके दोषी होने के पतरस के आरोप ने ''उन्हें दोषी ठहराया'' (''[उनके] हृदय छिद गए'') और उन्होंने उसी समय आज्ञा मानी। बिल्कुल यही ढंग है जिससे पवित्र आत्मा मनों पर दोष लगाता है। वैसे ही, यीशु द्वारा कहे गए शब्दों जीवन का कारण बनते हैं: ''आत्मा तो जीवनदायक है, शरीर से कुछ लाभ नहीं; जो बातें मैं ने तुम से कही हैं वे आत्मा हैं, और जीवन भी हैं'' (यूहन्ना 6:63)।

आयत 29. सामर्थ सचमुच में सुसमाचार में है (रोमियों 1:16)। इस दृष्टांत में ज़ोर कटनी पर दिया गया है, जब किसान **हंसिया लगाता है**। परमेश्वर उन तरीकों का इस्तेमाल कर सकता है जिनका हमें पता नहीं जिससे कुछ लोग दूसरों से बढ़कर ग्रहण करने वाले हो सकते हैं। वह किसी ग्रहणशील मन के लिए किसी उपदेशक को देने का ईश्वरीय प्रबन्ध कर सकता है। उसका ईश्वरीय प्रबन्ध इथोपिया के मंत्री को फिलिप्पुस को सिखाने के मामले में इस्तेमाल किया गया। फोकस बोने वाले के **कटनी** का समय जाने पर हंसिया लगाने पर है। यह फिर से यीशु की ओर इशारा करता हो सकता है, जो अंतिम न्याय पर होने वाली कटनी काटता है।[32] जेम्स बर्टन कॉफ़मैन ने सुझाव दिया कि यह इस जीवन में मसीह के लिए आत्माओं को इकट्ठा करना है। यह बीज बोने वाले के सम्बन्ध में होता है जो परमेश्वर के वचन को सुनाता या सिखाता है। उसने आगे कहा:

> उसे यह ज्ञान होना कि कब हंसिया लगाना है, उसकी अज्ञानता के बावजूद कि यह ''कैसे'' हुआ, मनुष्यों के बिना पूरी जानकारी के कि यह ''कैसे'' हुआ, आत्मिक फल काटने की योग्यता का उत्तर देता है (यूहन्ना 3:5)।
> कटनी इस वर्तमान युग में मसीह के राज्य में आत्माओं को इकट्ठा करना है।[33]

4:27 में आदमी के सोने और जागने की बात केवल इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाती है कि वह बीज में प्राण नहीं डाल सकता। वह शक्ति केवल परमेश्वर के पास है और उसने यह

काम कर लिया है, परन्तु फिर भी हम में से हर किसी की जिम्मेदारी बीज को ग्रहण करना है।

राई के बीज का दृष्टांत (4:30-34)[34]

[30]फिर उसने कहा, ''हम परमेश्‍वर के राज्य की उपमा किससे दें, और किस दृष्टान्त से उसका वर्णन करें? [31]वह राई के दाने के समान है: जब भूमि में बोया जाता है तो भूमि के सब बीजों से छोटा होता है, [32]परन्तु जब बोया गया, तो उगकर सब सागपात से बड़ा हो जाता है, और उसकी ऐसी बड़ी डालियाँ निकलती हैं कि आकाश के पक्षी उसकी छाया में बसेरा कर सकते हैं।'' [33]वह उन्हें इस प्रकार के बहुत से दृष्टान्त दे देकर उनकी समझ के अनुसार वचन सुनाता था, [34]और बिना दृष्टान्त कहे वह उनसे कुछ भी नहीं कहता था; परन्तु एकान्त में वह अपने निज चेलों को सब बातों का अर्थ बताता था।

आयत 30. यीशु ने अपने अगले दृष्टांत का आरम्भ एक प्रश्‍न के साथ किया, जैसे कि उसे पता न चल पा रहा हो कि वह अपने सामने के लोगों से क्या कहे: ''**हम परमेश्‍वर के राज्य की उपमा किससे दें, और किस दृष्टान्त से उसका वर्णन करें?**'' सिखाने के इस ढंग का इस्तेमाल रब्बियों द्वारा किया जाता था, जो कि शायद आगे कही जाने वाली बात की ओर ध्यान खींचने और उनके विचारों को बढ़ावा देने के लिए उस समय के संसार का वर्णन करने का ढंग था। यीशु सिखाने के आम इस्तेमाल में लाए जाने वाले ढंगों के विरुद्ध नहीं था।

आयतें 31, 32. इसके बाद जो दृष्टांत यीशु ने कहा, उसे आम तौर पर ''राई के बीज का दृष्टांत'' कहा जाता है: ''**वह** [परमेश्‍वर का राज्य] **राई के दाने के समान है: जब भूमि में बोया जाता है तो भूमि के सब बीजों से छोटा होता है, परन्तु जब बोया गया, तो उगकर सब सागपात से बड़ा हो जाता है, और उसकी ऐसी बड़ी डालियाँ निकलती हैं कि आकाश के पक्षी उसकी छाया में बसेरा कर सकते हैं।**''

पलिश्तीन में राई के बीज को बीजों में सबसे छोटा माना जाता था। उस समय बागों में बोए जाने वाले बीजों में यह सबसे छोटा होता था। आलोचकों का कहना है, ''परन्तु यह इस्राएल में सबसे छोटा बीज नहीं था; हवा से बिखरने वाले बीज इससे भी छोटे हैं।'' परन्तु ऐसे बीज जंगली घास के होते हैं; वे ऐसे बीज नहीं होते जिन्हें बोया जाए।

यह दृष्टांत राज्य के अपने छोटे से आरम्भ से फैलने की भविष्यद्वाणी है। यह बहुत बड़ा, अचानक बढ़ जाने वाला नहीं होना था, न ही यह खून खराबे से रोम के तख्ता पलट का कारण बनना था। सबसे छोटे बीज की तरह जो कि इस्राएल में सबसे बड़ी बूटी बन जाता था, मसीह के राज्य ने भी ऐसे ही बढ़ना था।

यीशु ने जिस पौधे की बात की कि वह दस से पन्द्रह फुट ऊंचाई तक जा सकता था।[35] परमेश्‍वर हमेशा छोटी और मामूली चीज़ों से बड़े काम करवा सकता है। किसे पता कि वह इस समय छोटे और साफ़ तौर पर अपने अनुयायियों की मामूली सी गिनती से अब पृथ्वी पर क्या करवा रहा है? यीशु के इस दृष्टांत के कहने के चालीस वर्षों के अंदर-अंदर, राज्य रोमी जगत के सांस्कृतिक केन्द्रों और इसके आगे तक फैल गया। कुलुस्सियों 1:6, 23 में पौलुस ने कम से कम यहां तक दावा किया। यह आज फैल रहा है और प्रभु की कलीसिया की मण्डलियां ऐसी जगहों

पर मिल जाती हैं जहां मिशनरी पहले कभी नहीं गए। राज्य, अर्थात प्रभु की कलीसिया फैलती रहेगी और पाप के साम्राज्य को पराजित करती रहेगी चाहे देखने में हमें मामूली लगे। दानिय्येल उस छोटे पत्थर की भविष्यद्वाणी जिसने चूर-चूर करके संसार में फैल जाने, एक उपयुक्त उपमा थी (दानियेल 2:44, 45)। डेविड एवरेट ने इस घटना को एक संक्षिप्त आयत में दिखाया है:

बड़े-बड़े नाले छोटे-छोटे झरनों से निकलते हैं,
बड़े-बड़े बलूत छोटे-छोटे बीजों से बढ़ते हैं।[36]

क्या यीशु के कहने का मतलब यह था कि उसके राज्य ने, उसके द्वितीय आगमन से पहले, पूरी पृथ्वी में फैल जाना था? लगता तो ऐसा ही है! यीशु ने यरूशलेम में बारह पुरुषों (या 120 चेलों या कुल 132 लोगों; देखें प्रेरितों 1:15) के साथ आरम्भ किया; परन्तु सम्भवतया गलील में उसने पांच सौ से अधिक भाइयों को दर्शन दिया, बेशक उसके चेले ही थे (देखें 1 कुरि.15:6)। पिन्तेकुस्त के दिन प्रेरितों पर आत्मा के उतरने के समय वहां पहली बार मिलाए गए लोगों की संख्या तीन हज़ार हो गई (प्रेरितों 2:41); और प्रेरितों 4:4 तक पांच हज़ार लोग "वचन के सुनने वाले" हो गए थे जिन्होंने "विश्वास किया" था। प्रेरितों के काम के काम की पूरी पुस्तक में कलीसिया के बढ़ते रहने की बात है जिसमें हज़ारों की संख्या में लोग मिलते गए (देखें 5:14; 6:1, 7)। थोड़ी देर बाद ही "हज़ारों" (μυριάς, *murias*) मसीही थे, जिसका अर्थ है "कई हज़ार" (21:20)। कोई संदेह नहीं कि यहूदिया और गलील के बहुत से यहूदियों ने यीशु के आश्चर्यकर्मों के बारे में सुना हुआ था, उन्होंने उसकी शिक्षाओं को माना हो या न; परन्तु जी उठे मसीह को अपनी आंखों से देख लेने वाले लोग प्रेरितों की शिक्षा का विरोध नहीं कर पाए। निश्चय ही प्रभु आज भी चाहता है कि कलीसिया बढ़े। हमें इस उद्देश्य के लिए सोचते रहना और काम करते रहना चाहिए।

खेती करने के लिए बहुत सा विश्वास और बहुत सा धीरज होना आवश्यक है। शायद बाइबल में इसी लिए खेती करने की उपमाएं बार-बार मिल जाती हैं। हम पढ़ते हैं, "हम भले काम करने में साहस न छोड़ें, क्योंकि यदि हम ढीले न हों तो ठीक समय पर कटनी काटेंगे" (गला. 6:9)। परन्तु जब हम काम कर रहे होते हैं शैतान तभी उसे जो बोया गया है चुगने के लिए लगातार काम करता रहता है। हमें कीमती बीज को बिखेरने में लगे रहना आवश्यक है। शैतान तुरन्त प्रतिफल और संतुष्टि का वायदा कर सकता है; परन्तु परमेश्वर की प्रेरणा से दिए गए पौलुस के वचन यकीन दिलाते हैं कि यदि हम थकान के आगे हार माने बिना प्रभु के काम के लिए बीज बोते रहते और काम करते रहते हैं तो हम आत्माओं की कटनी काटेंगे। बहुत से काम करने वाले लोगों को सुसमाचार को जवाब देते देखकर थककर हिम्मत हार जाते हैं। विशेषकर उन लोगों को सिखाने में सहायता की।

आयतें 33, 34. वह उन्हें इस प्रकार के बहुत से दृष्टान्त दे देकर उनकी समझ के अनुसार वचन सुनाता था। "जिस प्रकार से दृष्टांतों में वचन को छिपाने की योग्यता (4:11-12), वैसे ही उनमें इसे प्रकट करने की भी योग्यता थी (4:3, 9, 23, 33)।"[37] मरकुस ने सम्भवतया यीशु की निजी व्याख्याओं को दर्ज नहीं किया, परन्तु उसने यह अवश्य बताया कि वह "उनकी समझ के अनुसार वचन सुनाता था।" प्रभु अपने गम्भीर सुनने वालों को केवल वही बताता था

जिसे वे समझ सकते थे। कई बार सिखाने वाले छात्रों पर अधिक बोझ लादकर उन्हें ऐसे विचारों से उलझा देते थे, चाहे उनके लिए अजीब होते थे। संसार में से आकर मनपरिवर्तन करने वाले लोग आम तौर पर अपने आपको खोई हुई भेड़ों जैसा समझते थे और शायद उन्हें समझना चाहिए। उन्हें बड़ा होने में सहायता करना आवश्यक है। यीशु ने वही बताया जिसे लोग समझ सकते थे आसानी से याद रख सकते थे और दूसरों को बता सकते थे।

फिर से इस बात को याद रखना आवश्यक है कि दृष्टांत को समझा देने के बाद आसानी से याद रखा जा सकता है और कभी भी इस्तेमाल किया जा सकता है। साफ़ है कि **बिना दृष्टान्त कहे वह उनसे कुछ भी नहीं कहता था; परन्तु एकान्त में वह अपने निज चेलों को सब बातों का अर्थ बताता था।** मसीह की पाठशाला में, कोई भाई तब तक पास नहीं कर सकता जब तक वह प्राथमिक शिक्षा में निपुण नहीं हो जाता। अपनी करुणा में परमेश्वर हम पर उससे अधिक बोझ नहीं डालता जितना हम सहने के योग्य होते हैं। फिर भी यदि हम सच्ची लगन से और ढूंढ़े तो हमें दूसरों से जो उन्हें इस समय मिल रहा है, कहीं बढ़कर मिल सकता है। यदि दृष्टांत कुछ लोगों के लिए ठोकर का कारण थे तो एकांत में की गई व्याख्या से वे उन्हें समझाकर यीशु के और निकट ले आते थे।

यीशु ने और बहुत से दृष्टांत दिए जो मरकुस में लिखे नहीं गए। मत्ती 13:24–50 में जंगली बीज, खमीर, छिपे हुए धन और जाल की कई कहानियां हैं। मरकुस में दिए गए दृष्टांतों में चाहे वे सभी दृष्टांत नहीं है जो उसने दिए, परन्तु पाठक को बीज अर्थात परमेश्वर के वचन की सामर्थ और कटनी के आनन्द को समझाने के लिए इतने ही काफ़ी हैं।

''शांत रह, थम जा'' (4:35–41)[38]

[35]उसी दिन जब साँझ हुई, तो उसने चेलों से कहा, ''आओ, हम पार चलें।'' [36]और वे भीड़ को छोड़कर जैसा वह था, वैसा ही उसे नाव पर साथ ले चले; और उसके साथ और भी नावें थीं। [37]तब बड़ी आँधी आई, और लहरें नाव पर यहाँ तक लगीं कि वह पानी से भरी जाती थी। [38]पर वह आप पिछले भाग में गद्दी पर सो रहा था। तब उन्होंने उसे जगाकर उससे कहा, ''हे गुरु, क्या तुझे चिन्ता नहीं कि हम नष्ट हुए जाते हैं?'' [39]तब उसने उठकर आँधी को डाँटा, और पानी से कहा, ''शान्त रह, थम जा!'' और आँधी थम गई और बड़ा चैन हो गया; [40]और उनसे कहा, ''तुम क्यों डरते हो? क्या तुम्हें अब तक विश्वास नहीं?'' [41]वे बहुत ही डर गए और आपस में बोले, ''यह कौन है कि आँधी और पानी भी उसकी आज्ञा मानते हैं?''

सुसमाचार के मरकुस का विवरण कुछ भागों में है, जिसमें पहले दृष्टांत आते हैं और फिर आश्चर्यकर्म। इस विवरण के बाद अध्याय 5 में तीन और आश्चर्यकर्म हैं। ये चार कहानियां प्रकृति, दुष्टात्माओं, बीमारी और मृत्यु पर यीशु के अधिकार की ओर ध्यान दिलाती हैं। मरकुस 4–8 में चार में से पहली बार यीशु गलील की झील के ऊपर चला (4:36; 5:21; 6:32; 8:10)।

यह पुस्तक रोमियों के लिए लिखी गई थी, ''जिनकी दिलचस्पी कार्यवाही, शक्ति, विजय

में होती थी।''[39] यीशु ने उनके लिए अपने आपको बहुत ऊर्जा से भरे, हर समय काम करते रहने वाले, नये नये इलाकों में जाने वाले, यानी ''प्रकृति की विनाशकारी शक्तियों पर, बीमारी पर, दुष्टात्माओं पर, मृत्यु और नैतिक-आत्मिक अंधकार पर एक और केवल एक छुटकारा दिलाने वाला विजेता'' के रूप में दिखाया।[40]

यूहन्ना 2:1-10 पानी को दाखरस बना देने में प्रकृति पर यीशु की शक्ति को दिखाता है, और मरकुस का यह वाला भाग प्रकृति के एक और भाग पर उसकी शक्ति के हमारे ज्ञान को बढ़ा देता है। परमेश्वर होने के कारण, उसके पास प्राकृतिक संसार पर सामर्थ है। वह परमेश्वर जिसने लाल समुद्र को सुखा दिया ताकि इस्राएली उसमें से निकल सकें, बड़ी आसानी से तूफ़ान को शांत कर सकता था। जो लोग यह कहते हैं कि जिस तरह से पहली सदी में मसीह आश्चर्यकर्म करता था वैसे ही वे भी कर सकते हैं, जानते हैं कि समुद्र में तूफ़ान को शांत करने का प्रयास मूर्खता होगा।

आयतें 35, 36. मरकुस अधिक सामान्य दृष्टांतों से यीशु के जीवन की कार्यवाही की इस शानदार घटना की ओर मुड़ गया। यह विवरण इस बात को स्पष्ट कर देता है कि यीशु के लिए यह व्यस्त दिन के बाद **सांझ** का समय था। **उसने चेलों से कहा, ''आओ, हम पार चलें।'' और वे भीड़ को छोड़कर जैसा वह था, वैसा ही उसे नाव पर साथ ले चले; और उसके साथ और भी नावें थीं।**

आयतें 37, 38. तब बड़ी आँधी आई, और लहरें नाव पर यहाँ तक लगीं कि वह पानी से भरी जाती थी। गलील की झील के आस-पास नोकदार दर्रों के कारण आंधी आना और अचानक तूफ़ान आ जाना आम बात है, विशेषकर दोपहर के समय। हर्मोन पहाड़ (समुद्र तल से 9,200 फुट ऊपर) से नीचे तराई और झील में (भूमध्य सागर के तल से 682 फुट नीचे),[41] हवा चलने से तेज़ तूफ़ान आ जाता है जिसमें पहाड़ की ठण्डी हवा गर्म हवा और झील के पानी के साथ टकराती है और आम तौर पर बारिश के तूफ़ान के बिना तेज़ लहरें बन जाती हैं। यह तूफ़ान अनुभवी मछुआरों के लिए भी खतरा हो सकता है।[42]

यीशु ने **पिछले भाग में** धीरे से **गद्दी**[43] पर सिर रखा और सो गया, जबकि तूफ़ान नाव को डुबोने वाला था। ''आंधी के इतने तेज होने पर'' यीशु कैसे सो सकता था? मत्ती 8:24 में इस ''तूफ़ान'' के लिए इस्तेमाल किया गया शब्द σεισμός (*seismos*) है जिससे हमें अंग्रेज़ी शब्द ''सीसमोलोजी'' (भूकम्प विज्ञान) मिला है; यह किसी भूकम्प में आने वाली बड़ी हलचल का संकेत है।[44] दिन भर प्रचार से थके हुए यीशु को कहीं भी नींद आ सकती होगी।

डरे हुए चेलों ने उसे जगाया और पूछा, **''हे गुरु, क्या तुझे चिन्ता नहीं कि हम नष्ट हुए जाते हैं?''** उन्होंने उस पर चिंता न करने का आरोप लगाया! सच यह था कि उनके पास *न* डरने के अच्छे कारण थे। पहला कारण यह था यीशु ने कहा था कि वे पार जा रहे हैं (4:35)। यीशु की कही हर बात और आज्ञा में इसे पूरा करने की सामर्थ थी। दूसरा कारण यह था, वह उनके साथ था! उनका विश्वास डोलना नहीं चाहिए था, तूफ़ान में भी नहीं, क्योंकि मसीह उनके साथ था। उसकी योजनाओं को अंजाम देने से कोई भी चीज़ रोक नहीं सकती थी, चाहे वह जागा हुआ होता या सोया हुआ।

साफ़-साफ़ कहें तो हमें यह मानना पड़ेगा कि उन्हें उसकी योजनाओं की अभी समझ नहीं

थी। फिर भी उन्होंने आश्चर्यकर्मों में दिखाई गई उसकी सामर्थ को देखा हुआ था, और उन्हें भरोसा होना चाहिए था कि वह इस स्थिति को सम्भाल लेगा। वे देख सकते थे कि यीशु शांत था, जो कि उनके लिए काफ़ी होना चाहिए था। उनमें इतना विश्वास नहीं था कि यह समझ पाएं कि यीशु के साथ होने पर वे सुरक्षित हैं।

आयत 39. तब उसने उठकर आँधी को डाँटा, और पानी से कहा, ''शान्त रह, थम जा!'' और आँधी थम गई और बड़ा चैन हो गया। मरकुस धीरे-धीरे हमें यीशु की महिमा और सामर्थ दिखाने ले आया है। यीशु ने आकाश को खुलते हुए, आत्मा उसके ऊपर उतरा देखा और उसे स्वर्गदूतों की सेवकाई से लाभ मिला (1:10, 13)। हमने देखा है कि परमेश्वर ने उसके पुत्र होने की गवाही दी (1:11)। यीशु अधिकार के साथ उपदेश देता, बीमारों को चंगा करता, दुष्टात्माओं को निकालता और पापों की क्षमा देता था। जिसने आंधी और झील को बनाया केवल वही यूनानी भाषा में दो शब्दों के साथ इसे शांत करने के लिए डांट सकता था (σιώπα, πεφίμωσο, *siōpa, pephimōso*)। जब हम इन कामों के विवरणों पर ध्यान देते हैं तो हम एक दम से मसीह को सृष्टिकर्त्ता के साथ साथ प्रभु और छुड़ाने वाले के रूप में देखते हैं। बोलकर इतना शांत कर देने की शक्ति की हम कल्पना भी नहीं कर सकते। आम तौर पर हम मौसम की बात करते हैं, परन्तु इसे बदल केवल ईश्वरीय हाथ सकता है।

आयतें 40, 41. यीशु ने चेलों से यह कहते हुए डांटा, ''**तुम क्यों डरते हो? क्या तुम्हें अब तक विश्वास नहीं?**'' मत्ती 8:26क के अनुसार उसने उन्हें ''हे अल्पविश्वासियो'' कहते हुए सम्बोधित किया लूका 8:25 में यह रूखा सा प्रश्न है, ''तुम्हारा विश्वास कहां था?'' यीशु उन्हें बताना चाहता था कि वे इतने डरे हुए क्यों थे। जिस किसी ने समुद्र में ऐसा तूफ़ान देखा हो, वह उनके डर को समझ सकता है। ऐसी परिस्थितियों में किसी नाव में खड़े होने के लिए प्रेरितों में से किसी एक के लिए बड़ा साहस होना आवश्यक था। परन्तु यीशु के लिए यह एक स्वाभाविक बात थी। उसे उससे कोई डर नहीं था, जिसे उसने बनाया था, वह चाहे समुद्र हो, आंधी, या लहरें क्यों न हों। यह स्पष्ट है कि मनुष्य के पुत्र को अपने पिता और उसकी अपनी शक्ति पर पूरा भरोसा था। **वे बहुत ही डर गए और आपस में बोले, ''यह कौन है कि आँधी और पानी भी उसकी आज्ञा मानते हैं?''** एक बार फिर से, यह उसके परमेश्वर होने का अटल प्रमाण है।

प्रासंगिकता

दूसरों को उपदेश देने की बड़ी आवश्यकताएं (4:1-9)

इस अध्याय के आरम्भ में, यीशु को फिर से गलील की झील के पास उपदेश देता हुआ दिखाया गया है। उसकी उपस्थिति ने लोगों की बड़ी भीड़ को आकर्षित किया था। वे उसके आस-पास यहां तक इकट्ठा हो गए थे कि उसे झील की ओर धकेल दिया गया। व्यावहारिक समझ का इस्तेमाल करते हुए यीशु ने एक नाव में जाने की सावधानी बरती। किनारे से कुछ फुट की दूरी पर नाव को अटकाकर यीशु उस में बैठ गया और भीड़ से बातें करने लगा।

उसने पहले दृष्टांतों का इस्तेमाल किया था, परन्तु अब वह लम्बे और अधिक विस्तृत दृष्टांतों

का इस्तेमाल कर रहा था (4:2)। सिखाने की यह शैली कुछ लोगों के लिए जो सुन रहे थे नई थी जबकि दूसरों को कीमती चीज़ों का प्रकाश दिया जा रहा था।

इस असाधारण पृष्ठभूमि में उसका पहला दृष्टांत वह दृष्टांत है जिसे किसी और जगह "बोने वाले का दृष्टांत" कहा गया है (मत्ती 13:18)। लिखित रूप में केवल यही एक दृष्टांत है जिसे यीशु ने नाम दिया। सुसमाचार के सिखाने में इसकी व्यापक प्रभाव और गहराई के कारण, यह उसके सबसे प्रसिद्ध दृष्टांतों में से एक बन गया है।

एक दृष्टिकोण से, यह दृष्टांत दूसरों को सुसमाचार बताने के कार्य, योजना और काम करने का वर्णन करता है। इसमें हमें सिखाने के सभी कारण, सिखाने की निराशाएं और असफलताएं, सिखाने के सुखद परिणाम मिल जाते हैं। विशेषकर यह उन आवश्यक बातों को बताता है जो किसी भी सिखाने के अवसर के लिए हैं। आइए पूछते हैं, "वास्तविक शिक्षा अंजाम देने के लिए क्या होना आवश्यक है? दूसरों को सिखाने के लिए कौन कौन सी बातें आवश्यक हैं?"

1. वहीं से आरम्भ करते हैं जहां से दृष्टांत आरम्भ होता है: *बोने वाले* के साथ। यीशु ने संकेत दिया कि जब तक उपदेश देने वाला नहीं होगा तब तक नहीं हो सकता (या नहीं होगा)। इससे पौलुस की बात ध्यान में आती है: "और प्रचारक बिना कैसे सुनें?" (रोमियों 10:14)। हम इसे इस प्रकार भी कह सकते हैं: "या बिना उस्ताद के वे कैसे सीखेंगे?"

2. और गहराई में जाने पर हम यहां उपदेशक से भी बड़ी कोई चीज़ मिलती है। वह चीज़ *बीज* है। बाद में यीशु ने बीज को "वचन" बताया (4:14)। चेला बनाने का काम उपदेशक नहीं करता बल्कि बीज करता जो कि परमेश्वर का वचन है। इसी कारण पौलुस ने कहा, "इसलिए न तो लगाने वाला कुछ है और न सींचने वाला ..." (1 कुरि. 3:7)।

3. इससे एक और बात मिल जाती है, जिसका बड़ा महत्व है: उपदेश बीज के *छोड़ने* बिना नहीं हो सकता। प्रचारक या उपदेशक के लिए इस शक्तिशाली बीज को वहां ले जाना आवश्यक है जहां लोग हैं। खेत लोगों के मन हैं जिन्हें सुसमाचार की आवश्यकता है। यदि बोने वाला बीज "नहीं ले जाता" तो यह सुनहरी दाने में नहीं बदलेगा।

4. एक और आवश्यक बात *बोना* है। यह वह कार्य है जो बोने वाले, बीज और ले जाने को इकट्ठा कर देता है। इनमें से हर कोई दूसरे पर निर्भर है। उपदेश देने के हमारे प्रयास बेकार हो जाएंगे यदि हम बीज पर मुख्य ज़ोर देते हुए चारों को सही तरतीब में नहीं रखते।

5. इन चारों में से निकलने वाली पांचवीं आवश्यक बात *समझ* है। संदेश स्पष्ट और हस्तक्षेप से मुक्त होना आवश्यक है ताकि समझ आ सके। भरोसे का संदेश उन लोगों में बोया जाना आवश्यक है जो इसे समझ सकते हैं। हर किसान उस बीज पर जो उसने भूमि में बोया है निर्भर होता है; हर उपदेशक के लिए भी फल लाने के लिए स्पष्ट और समझ आने वाले ढंग को सुनाए गए संदेश पर निर्भर होना आवश्यक है।

6. दृष्टांत में और गहराई से देखने पर हम इसके विषय पर आते हैं: *अलग-अलग प्रकार की ज़मीन*। यीशु दिखा रहा था कि अलग-अलग तरह के मन सुसमाचार सुनाए जाने पर संदेश के साथ क्या करते हैं। उसने मार्ग के किनारे की भूमि, पथरीली भूमि, झाड़ियों वाली भूमि और अच्छी भूमि के साथ चार अलग-अलग प्रकार के मनों को दिखाया। कठोर मन अपने अंदर संदेश को नहीं आने देता। पथरीली भूमि जो कि ऊपर-ऊपर से सुनने वाले को दर्शाती है, संदेश

को गहराई से नहीं जाने देता। झाड़ियों वाली भूमि या अनमना व्यक्ति संदेश को असर नहीं करने देता। सुसमाचार प्रचारक या उपदेशक उपयुक्त भूमि, अर्थात सच्चे व्यक्ति की तलाश में है जो संदेश को पूरी तरह से और दिल से ग्रहण करे। फल लाने के लिए आवश्यक है कि बीज सचमुच में जड़ पकड़ ले।

7. एक और आवश्यक बात जिसे आम तौर पर नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है *समय* है। एक रात में कुछ नहीं उग सकता। ऐसा नहीं हो सकता कि आज खेत में कुछ बो कर अगले दिन फसल की उम्मीद की जाए। फल लगेगा, परन्तु इसे आने में दिन और कई बार हफ्ते लग जाते हैं।

8. अंत में हम इस प्रक्रिया की सबसे बड़ी और सबसे आवश्यक बात पर पहुंच गए हैं: जो कि *परमेश्वर* है। आइए एक बार फिर से पौलुस के शब्दों पर ध्यान देते हैं: ''इसलिये न तो लगानेवाला कुछ है और न सींचनेवाला, परन्तु परमेश्वर ही सब कुछ है जो बढ़ानेवाला है'' (1 कुरि. 3:7)। इससे इनकार करने की हिम्मत कौन करेगा कि ''परमेश्वर बढ़ानेवाला''? एक समय आता है जब बोने की सब बातों को परमेश्वर के हाथ में दे दिया जाता है और हम बढ़ाने के लिए उसकी राह देखते हैं।

9. बेशक इससे अगली आवश्यक बात *कटनी* है। पके हुए दाने, कुछ कुछ भूसी से ढके हुए, अपने डण्डियों में से झांकते हैं और किसी को उन्हें इकट्ठा करने के लिए बुला रहे होते हैं। समय आ चुका है; और यदि नहीं काटे जाते हैं तो वे खराब होकर बर्बाद हो जाएंगे। बोना, सींचना, और जोतना बिना कटनी के बेकार जाएगा। यीशु ने कहा, ''कोई तीस गुणा, कोई साठ गुणा और कोई सौ गुणा फल लाया'' (4:8)। हां उस कटनी में जो हुई, ''फल लाया'' गया।

10. तो फिर दसवीं आवश्यक बात कौन सी है? *प्रक्रिया।* साफ़ तौर पर यीशु अपने चेलों से बात कर रहा था जब उसने उन्हें प्रक्रिया को न समझने की चेतावनी दी। उसने कहा, ''जिसके पास सुनने के कान हो वह सुन ले'' (4:9)। ऐसी बात का इस्तेमाल यीशु ने छह अवसरों पर किया: मत्ती 11:15 में, यूहन्ना के विषय में; 13:9 में, बोने वाले के विषय में; मरकुस 4:9 में, बोने वाले के विषय में भी; 4:23 में, ज्योति के विषय में; 7:16 में, मन के विषय में; और लूका 14:35 में, चेला बनने के विषय में। संक्षेप में वह कह रहा था, ''ध्यान रखें कि तुम्हें समझ आ गया।'' चेले का जीवन वचन के बीज को बोने और काटने के साथ जुड़ा हुआ है; यीशु के अनुयायी के लिए यह बिल्कुल आवश्यक है कि उसे यहां बताई गई प्रक्रिया पर विश्वास हो और वह इसे समझता हो।

निष्कर्ष: हमें इस दृष्टांत को इतना महत्वपूर्ण क्यों मानना चाहिए? यह उस व्यावहारिक काम का सार है जो राज्य के लोगों के लिए करना आवश्यक है। राज्य के पुत्र आत्माओं के बीज को लगातार बोते, सींचते हुए काट रहे हैं। इस दृष्टांत में यीशु ने हमें हमारे काम की आवश्यक बातें बता दी हैं।

यीशु ने इस दृष्टांत के आरम्भ में ''सुनो'' और इसके अंत में ''जिसके पास सुनने के कान हों, वह सुन ले'' रखकर इसके महत्व पर ज़ोर दिया। ''कान'' योग्यता का अर्थ दे सकते हैं; ''सुनना'' अवसर का सुझाव देता है; और ''वह सुन ले'' उस जिम्मेदारी पर ज़ोर देता है जो सुनने वाले की है। किसी के पास कान होने का क्या लाभ यदि वह उनका इस्तेमाल ही नहीं

करता ? वचन को सुनने का क्या लाभ यदि कोई संदेश की ओर ध्यान नहीं देता ? सुनकर मानना आवश्यक है।

चेला अपना जीवन यह देखने के लिए दे देता है कि लोगों को सच्चाई का संदेश मानने का अवसर मिले। उसे सफल होने के लिए नहीं कहा जाता, चाहे उस लक्ष्य को पाने के लिए वह जो भी कर सकता है करेगा। इसके बजाय उससे विश्वासयोग्य होने को कहा जाता है, जिसका अर्थ यह है कि वह इस बात का ध्यान रखेगा कि बीज बोया गया और फिर इसे परमेश्वर को मोड़ दे। यह दृष्टांत चेले से कहता है, ''यह तेरा जीवन है।''

सीखने के प्रति रवैये (4:10-12)

यीशु अपने अनुयायियों और प्रेरितों को एकांत जगह में ले गया ताकि उसे उनके साथ व्यक्तिगत तौर पर बात करने का अवसर मिल सके। एकांत में पहुंचने पर, वे उससे उन दृष्टांतों के बारे में पूछने लगे जो उसने उन्हें और भीड़ को बताए थे।

दृष्टांतों की अपनी व्याख्या में यीशु मन की अपनी अवधारणा की ओर पीछे की ओर चला गया। वह अपने अनुयायियों को एक व्यापक विचार दे रहा था कि लोग सच्चाई को किस प्रकार से सुनते हैं और वे उनके साथ निजी तौर पर किस प्रकार से बातचीत करें। बोने वाले का दृष्टांत, कहा जाता है कि सचमुच में अलग-अलग प्रकार की भूमियों (या मनों) का दृष्टांत है। इसे ''परमेश्वर के वचन के प्रति लोगों के रवैयों का दृष्टांत'' कहा जा सकता है। बहुत से सुनने वाले जो यीशु को सुनने के लिए इकट्ठा हुए थे सुसमाचार को जानने के प्रति अलग-अलग प्रकार के रवैयों के साथ आए थे; उस बीज के प्रति जो उनके मनों में बोया गया था, उनकी अलग-अलग प्रतिक्रियाएं थीं।

अपने आस पास इकट्ठा हुए चेलों को यीशु के बताना जारी रखने से यह स्पष्ट है कि हर किसी ने उसके संदेश को ग्रहण नहीं करना था। हां, कुछ ने करना था; परन्तु बहुतों ने बेकार के कारणों से नहीं करना था।

आइए और ध्यान से देखते हैं कि सच्चाई को जानने के प्रति रवैयों के बारे में बातचीत करते हुए, यीशु ने क्या कहा।

1. यीशु ने पहले तो उनकी बात की जो अज्ञानी थे परन्तु *सीखने के इच्छुक* थे। उसने इस समूह में अपने चेलों को रखा। वह इन लोगों पर भरोसा करता था और उसने उन्हें वे लोग बताया जिन्हें परमेश्वर के राज्य का भेद दिया गया था। यह भेद कोई ऐसी बात नहीं थी जो छिपाई गई हो बल्कि यह ईश्वरीय प्रकाश था जो यीशु के उपदेश और सेवकाई के द्वारा दिया जा रहा था। बाद में यीशु ने कहा कि संदेश को पाने के इच्छुक लोगों ने इसे समझ लेना था, और उन्होंने उस संदेश को जिसे वह लेकर आया था, ढूंढ़ते रहकर और और ज्ञान पाते रहना था। मत्ती के अनुसार, उसने कहा, ''तुम को स्वर्ग के राज्य के भेदों की समझ दी गई है, पर उन को नहीं'' (मत्ती 13:11)।

सीखने की इस इच्छा का एक उदाहरण दिखाया गया है जिसमें यीशु द्वारा प्रेरितों को उसके पीछे चलने के लिए कहा जाने पर वे उसके पीछे चले। बाद में पतरस ने उस घटना को याद करते हुए कहा कि उन्होंने उसके पीछे चलने के लिए सब कुछ छोड़ दिया था (मत्ती 19:27)। पतरस की बात का यीशु का जवाब हर विश्वासी के लिए एक बड़ी प्रतिज्ञा थी: ''और जिस

किसी ने घरों, या भाइयों, या बहिनों, या पिता, या माता, या बाल-बच्चों, या खेतों को मेरे नाम के लिये छोड़ दिया है, उसको सौ गुना मिलेगा, और वह अनन्त जीवन का अधिकारी होगा'' (मत्ती 19:29)।

ये शब्द हमें याद दिलाते हैं कि हम कभी इतने बड़े न हों कि सीखना छोड़ दें। हमारा यीशु के साथ चलना आगे बढ़ते रहने वाला अनुभव है। जितना हम चलते हैं उतना सीखते हैं और उतना ही हम राज्य की आत्मिक बातों की भूख बढ़ाते रहते हैं।

2. इसका अर्थ यह हुआ कि यीशु ने उन लोगों के बारे में जो अज्ञानी थे परन्तु *सीखने में दिचलस्पी नहीं रखते थे* कई सच्चाइयां बताई होंगी। उसने अपना ध्यान उनकी ओर लगाया जो ''बाहर वाले'' (4:11) थे और उसकी बात को सुन नहीं रहे थे। यह बाहर वाले दो वर्गों में थे। पहले समूह के उदासीन मन है, चाहे इस वचन में उनका विशेष तौर पर उल्लेख नहीं है। वे प्रेरितों और उनके बीच में थे जो मसीह का विरोध करते थे: वे उन लोगों की भीड़ में थे जो बीच में थे या थोड़ा बहुत सुन रहे थे।

इन लोगों के इच्छुक मन नहीं थे, जो उन्हें परमेश्वर की सच्चाई को ध्यान से सुनकर, समझकर मानने के लिए विवश कर रहे हों। वे मरे हुए तो नहीं थे परन्तु समर्पित नहीं थे; किसी न किसी कारण से वे दूसरी धुन में लगे हुए थे। इसलिए 4:18 वाले ''वे'' की तरह उन्होंने दृष्टांतों से कुछ हासिल नहीं कर पाना था। हो सकता है कि उन्होंने कहानी तो सुन ली हो, परन्तु राज्य के बारे में उन्हें पता नहीं चलना था; यदि वे राज्य के विचार को समझ जाते तो उन्हें इसके लिए अपने मनों में जगह नहीं मिलनी थी। उनके मन दूसरी बातों से भरे हुए थे।

10:17-22 वाले धनवान हाकिम की दिलचस्पी यीशु में इतनी थी कि वह भागकर उसके पास आया और उसके आगे घुटने टेक दिए। यीशु के स्वभाव और राज्य के उसके संदेश ने उसके मन को छू लिया था। उसका मन तैयार था; वह यीशु के पीछे चलना चाहता था - जहां तक वह अपने मन के बाद धन, भूमि तथा अन्य सामान को पहल दे सके। जब यीशु ने उसे अपना सामान छोड़कर उसके पीछे चलने को कहा, तो वह दु:खी होकर चला गया। वह सच्चाई को जानने का इच्छुक था; पर जब इसकी प्राथमिकताओं की महत्वपूर्ण बात का पता चला तो उसे समझ में आया कि वास्तव में वह सच्चाई को नहीं चाहता था। अपनी सम्पत्ति और चीज़ों के साथ इसका अच्छा तालमेल था और वह सच्चाई को मानने के लिए अपने जीवन में मुकम्मल बदलाव नहीं चाहता था।

3. यीशु ने विशेष तौर पर उन लोगों की बात की जो अज्ञानी थे परन्तु *सीखने से इनकार कर रहे* थे। ये लोग बेपरवाह मनों से मरे हुए मन वाले व्यक्ति थे। यहां पर उनका वर्णन बड़े ही साफ़ ढंग से तेज़ी से आशा के पार होने की ओर बढ़ रहे लोगों के रूप में किया गया है। यही लोग हैं जिन्हें यीशु ने ''बाहर वाले'' कहा। उसने कहा, ''परन्तु बाहरवालों के लिये सब बातें दृष्टान्तों में होती हैं'' (4:11); परन्तु उन्हें यीशु की सेवकाई की सच्चाई के बारे में कभी पता नहीं चलना था। उसने कहा, ''वे देखते हुए देखें और उन्हें सुझाई न पड़े और सुनते हुए सुनें भी और न समझें; ऐसा न हो कि वे फिरें, और क्षमा किए जाएँ'' (4:12)। यीशु यशायाह 6:9, 10 से उद्धृत कर रहा था। ये लोग वे थे जिनकी आंखें, कान और मन थे; परन्तु वे यीशु को ऐसे जवाब दे रहे थे जैसे वे देख, सुन या समझ न सकते हों। कुछ मामलों में उन्होंने अपने कान बंद

कर लिए थे ताकि वे सुन न सकें, अपनी आंखें बंद कर ली थीं ताकि वे देख न सकें, और अपने मन कठोर कर लिए थे ताकि वे समझ न सकें। ऐसा नहीं कि वे समझ नहीं पाए बल्कि उन्होंने समझने से इनकार कर दिया। उन्हें परमेश्वर के पुत्र मसीह को जानने का अवसर मिला था, परन्तु उन्होंने अपना मुंह उससे ऐसे फेर लिया जैसे वह उनके पास कूड़ा ले आया हो।

पिलातुस इस प्रकार के व्यक्ति का एक उदाहरण है (15:1-15)। एक अर्थ में उसने प्रमाण तो सुना, परन्तु दूसरे अर्थ में उसने इसे सुना नहीं। उसने देखा, परन्तु वास्तव में उसने नहीं देखा। उसका मन उसकी अपनी स्वार्थी रुचियों से इतना भरा हुआ था कि सच्चाई के लिए उसमें कोई जगह नहीं थी। वह भीड़ से डरता था, क्योंकि वह अपनी गद्दी बनाए रखना चाहता था। उसका मन सच्चाई को मानने के लिए बंद था; नहीं तो वह मन फिराकर मसीह में बदल जाता।

ऐसा कैसे हो सकता है कि कोई यीशु के इतना निकट हो और उस सुधार को जिसे वह ला रहा था, देखें, पर इसे स्वीकार न करें? क्या हम किसी ऐसे व्यक्ति की कल्पना कर सकते हैं जिसे यीशु से जब वह पृथ्वी पर था, बातचीत करने का अवसर मिला हो, परन्तु वह उसमें और उस मिशन में विश्वास करके उस बातचीत से न निकला हो। पिलातुस के पास यीशु साथ जब तक वह चाहता बातचीत करने की शक्ति थी। परन्तु उसने अपने विवेक की आवाज़ सुनने के बजाय भीड़ की आवाज़ को सुना। वह समझना नहीं चाहता था और इस कारण सच्चाई उसके पास से हमेशा के लिए निकल गई।

निष्कर्ष: हमारे अंदर सबसे महत्वपूर्ण अंग हमारे मन या हमारे प्राण हैं। यीशु ने कहा कि प्राण का मूल्य सारे संसार से बढ़कर है। हमें यह भी बताया गया है कि जीवन का मूल मन ही है (नीति. 4:23; देखें KJV)। मन प्राण का भविष्य तय करता है। सभी निर्णय मन के गढ़ में लिए जाते हैं; मन ही वह जगह है जहां हम निर्णय लेते हैं कि हमें दिए गए प्रमाण का हम क्या करेंगे।

इसी प्रकार से हमारी प्रतिदिन की सोच से तय होता है कि अंत में हमारे मन कैसे खुल जाएंगे। इस जीवन का हमारा बड़ा काम सही प्रकार के मन को तैयार करने का है। जब परमेश्वर ने हम में से हर किसी को बनाया, तो उसने हमें अपने मनों के मालिक बना दिया। ऐसा करने के बाद उसने हमें उसे "न" कहने का अधिकार दे दिया! हमें यीशु के लिए दरवाज़ा बंद करके उसे अपने मनों में आने से रोकने की अनुमति है। स्वतन्त्र नैतिक पसंद की यह ज़बर्दस्त शक्ति है।

4:10-12 में यीशु ने हमारे मनों पर ध्यान लगाया। उसने हमेशा ध्यान किया। उसने ऐसा इसलिए किया क्योंकि उसके लिए करना आवश्यक था। यदि वह हमारे मनों को नहीं पकड़ता तो उसके पास हमारा कुछ खास नहीं रहता। यदि वह हमारे मनों को पकड़ लेता है तो वह हमें पूरे का पूरा पकड़ लेता है। वह हमें अपने राज्य और अनन्त जीवन में केवल तभी ले सकता है जब हम पूरी तरह से अपने आपको उसे देने के लिए सहमत हों।

हमें अनन्त जीवन मिलता है या नहीं, यह इस पर निर्भर करता है कि हमारे मन कैसे है। अपनी सेवकाई, शिक्षा, मृत्यु और पुनरुत्थान के द्वारा यीशु हमेशा ऐसे मन को दिखाता है जो किसी का है। प्रश्न यह है कि "इस प्रमाण के साथ कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है *आपका* मन क्या करेगा?" क्या आप अपने मन को इस बड़ी सच्चाई के प्रति मरने देंगे? क्या आप इसमें दिलचस्पी नहीं लेंगे? क्या आप इसके लिए समर्पित होंगे?

परमेश्वर का वचन और बीज (4:13-20)

बोने वाले के इस दृष्टांत में अपनी व्याख्या में यीशु ने स्पष्ट कर दिया कि खेत में बोया जाने वाला बीज परमेश्वर का वचन था। उसके वास्तविक शब्द यह थे: ''बोनेवाला वचन बोता है'' (4:14)। बोने वाले की परिभाषा हम तीन तरीके से दे सकते हैं। पहला, हम कह सकते हैं कि बोने वाला मसीह स्वयं है क्योंकि वह संसार में परमेश्वर का वचन देने के लिए आया। दूसरा, हम कह सकते हैं कि प्रेरित तथा परमेश्वर की प्रेरणा पाए हुए दूसरे लेखक उस बात में बोने वाले हैं कि उन्होंने लिखित रूप में हमें परमेश्वर का संदेश दिया। तीसरा, हर युग के मसीही लोगों को बोने वाले बताया जा सकता है जब वे परमेश्वर की सच्चाइयां उन लोगों को जो उन्हें सुनेंगे, बताने के लिए निकलते हैं।

अपनी व्याख्या को जारी रखते हुए यीशु ने भूमि की अलग-अलग किस्में बताईं, विशेषकर यह दिखाते हुए कि संसार उस बीज को कैसे ग्रहण करे। उसने तीन दोषपूर्ण मनों की बात की: *भरा हुआ* मन, *कागज के समान पतला* मन और *दूसरी ओर लगा* मन। इसके अलावा उसने उपजाऊ मन की बात की, जो तीस गुणा, साठ गुण या सौ गुणा फल लाया। फल लाने की अलग-अलग क्षमता वाले तोड़ों का दृष्टांत ध्यान में आता है (मत्ती 25:14-30)।

बोने वाले और भूमि से बीज की ओर बढ़ते हुए हम देखते हैं कि बीज कितना मूल्यवान और अद्‌भुत है। बीज ईश्वरीय योजना में परमेश्वर के वचन को काम करने को दिखाता है। यह वह संदेश है जिसे परमेश्वर उन लोगों के पास भेजता है जो उसकी इच्छा को जानने के इच्छुक हैं।

दृष्टांत की सबसे दिलचस्प बातों में से एक यह है कि परमेश्वर का वचन बीज के समान कैसे है। दृष्टांत के पूरे संदेश में, परमेश्वर के वचन की बीज से तुलना साफ़ दिखाई देती है। यीशु उत्तम गुरु और उसके उदाहरणों की बनावट, सामग्री और प्रस्तुति में कोई खोट नहीं है।

बीज और परमेश्वर का वचन एक जैसे कैसे हैं? सुसमाचार का संदेश बीज के साथ कैसे मेल खाता है?

1. हमें अपनी तुलना का आरम्भ इस तथ्य के साथ करना होगा कि बीज और सुसमाचार एक अर्थ में एक जैसे हैं कि दोनों बोने वाले पर निर्भर हैं। अपना काम कर पाने से पहले किसान के लिए अपने बीज को बोना आवश्यक है, नहीं तो वह कटनी नहीं काट पाएगा। प्रचारक, उपदेशक या किसी दूसरे निजी शिक्षक के लिए परमेश्वर के वचन के पाने से पहले बीज को बोना आवश्यक है। नमकदानी में नमक किसी चीज़ को नमकीन नहीं करता, और बेकार पड़ा परमेश्वर का वचन किसी को मसीह तक नहीं ले जाएगा या किसी को मसीह के स्वरूप में बढ़ने में सहायता नहीं करेगा।

किसी को केवल बाइबल दे देना काफ़ी नहीं है। यीशु चाहता है कि उसका सुसमाचार दूसरों को बताया जाए। ग्रेट कमीशन में उसने हमें इसका प्रचार करने को कहा जिसका वर्णन मरकुस 16:15 में है: ''तुम सारे जगत में जाकर सृष्टि के लोगों को सुसमाचार प्रचार करो।'' उसने यह भी कहा, ''भविष्यद्वक्ताओं के लेखों में यह लिखा है: 'वे सब परमेश्वर की ओर से सिखाए हुए होंगे।' जिस किसी ने पिता से सुना और सीखा है, वह मेरे पास आता है'' (यूहन्ना 6:45)।

2. इसके अलावा हम असानी से यह जान सकते हैं कि बीज और परमेश्वर का वचन इस अर्थ में एक जैसे हैं कि *दोनों में जीवन है*। किसान इस बात को समझता है कि जीवन बीज

के अंदर है। हम जानते हैं कि हल चलाने, बोने और झाड़ियों को निकालने के बाद, जीवन फूट निकलेगा: ''पहले अंकुर, तब बाल, और तब बालों में तैयार दाना'' (4:28)।

मसीही व्यक्ति को समझ है कि परमेश्वर का जीवन उसके वचन में है, क्योंकि उसके जीवते वचन के द्वारा उसे मसीह में जन्म मिला था। पतरस ने इसे स्पष्ट किया: ''क्योंकि तुम ने नाशवान नहीं पर अविनाशी बीज से, परमेश्वर के जीवते और सदा ठहरने वाले वचन के द्वारा नया जन्म पाया है'' (1 पतरस 1:23)।

मसीही व्यक्ति यह भी जानता है कि मसीह में उसका बढ़ना जीवनदायक ''वचन के दूध'' से होता है (1 पतरस 2:2)। जिस प्रकार से यह पक्का है कि बीज में जीवन है, वैसे ही परमेश्वर के वचन में जीवन है। ''परमेश्वर का वचन जीवित और प्रबल है'' (इब्रा. 4:12)।

3. बीज परमेश्वर के वचन के जैसा इस अर्थ में भी है कि *दोनों में बदल देने की सामर्थ है*। बीज के साथ किसान बंजर, जोती हुई भूमि को लहलहाते अनाज के खेत में बदल सकता है। वह यह जानते हुए बोता है कि बीज सचमुच में पूरे खेत में फैल जाएगा और इसमें से फसल देगा।

इसी प्रकार से हम ने लोगों को परमेश्वर के वचन से पूरी तरह से बदलते और नये होते देखा है। यह प्रक्रिया मन परिवर्तन के साथ आरम्भ होती है। इस सच्चाई को बताने वाला हमारा गुरु पतरस है: ''अत: जब कि तुम ने भाईचारे की निष्कपट प्रीति के निमित्त सत्य के मानने से अपने मनों को पवित्र किया है, तो तन मन लगाकर एक-दूसरे से अधिक प्रेम रखो'' (1 पतरस 1:22)। पौलुस समझाता है कि हमारी आत्माओं का बदलना हर दिन कैसे होता रहता है, ''जब हम सब के उघाड़े चेहरे से प्रभु का प्रताप इस प्रकार प्रगट होता है, जिस प्रकार दर्पण में, तो प्रभु के द्वारा जो आत्मा है, हम उसी तेजस्वी रूप में अंश अंश कर के बदलते जाते हैं'' (2 कुरि. 3:18)। इस हवाले में चाहे वचन का उल्लेख नहीं है, परन्तु ''प्रगट'' पवित्र शास्त्र में हमारे देखने और उसे जज़्ब कर लेने से होता है। याकूब ने इसे इस प्रकार से कहा: ''पर जो व्यक्ति स्वतन्त्रता की सिद्ध व्यवस्था पर ध्यान करता रहता है, वह अपने काम में इसलिए आशीष पाएगा कि सुनकर भूलता नहीं पर वैसा ही काम करता है'' (याकूब 1:25)। लिखित वचन परमेश्वर के आत्मा के द्वारा परमेश्वर की सामर्थ से जुड़ा हुआ है। इसके द्वारा बदले बिना कोई परमेश्वर की इस सामर्थ में रह नहीं सकता।

4. बीज और परमेश्वर का वचन इस अर्थ में एक जैसे हैं कि *दोनों पर उस भूमि का असर होता है* जिसमें वे रहते हैं। किसान के लिए फसल लेने के लिए आवश्यक है कि वह बीज को बोये और इसके भूमि में से फूटने से पहले इसे उसमें गाड़ा जाने दे। कटाई की अपनी योजनाएं बनाते हुए उसे भूमि की किस्म से भी परिचित होना आवश्यक है। जिस भूमि का वह इस्तेमाल कर रहा है उसकी किस्म से उसकी उपज पर बहुत फर्क पड़ेगा।

ऐसे ही, मनुष्य के मानवीय मन के लिए परमेश्वर के वचन को काम करने के लिए उसे ग्रहण करना आवश्यक है। मन के लिए वचन को आनन्द से ग्रहण करने और इसका स्वागत करने के लिए खुला होना आवश्यक है। जैसे मन ने इस वचन को ग्रहण किया होगा वैसा ही इस बीज का फल होगा। इस तथ्य को बिरिया के लोगों के द्वारा समझाया गया है। लूका उनके लिए कहता है, ''ये लोग तो थिस्सलुनीके के यहूदियों से भले थे, और उन्होंने बड़ी लालसा से वचन ग्रहण

किया, और प्रतिदिन पवित्र शास्त्रों में ढूंढते रहे कि ये बातें योंहीं हैं कि नहीं'' (प्रेरितों 17:11)। ऐसे मन वाले लोगों के लिए हमें अगली आयत पढ़कर कोई आश्चर्य नहीं होगा, ''इसलिए उनमें से बहुतों ने ... विश्वास किया'' (प्रेरितों 17:12)। पिन्तेकुस्त वाले दिन पर जिन्होंने ''वचन ग्रहण किया उन्होंने बपतिस्मा लिया'' (प्रेरितों 2:41)। KJV कहता है कि उन्होंने इसे ''आनन्द से'' ग्रहण किया। यह लोगों के सुसमाचार के संदेश को ग्रहण करने और इसे झट से मान लेने के लिए उनकी उत्सुकता का संकेत देता है।

निष्कर्ष: बीज और परमेश्वर का वचन पृथ्वी की दो सबसे दिलचस्प चीज़ों हैं। एक तो सिक्के से भी छोटा है, जबकि दूसरा शैल्फ पर रखी बेजान पुस्तक लगता है। परन्तु दोनों ही जीवन से भरपूर हैं। वैज्ञानिक अपनी समझ, अनुसंधान की प्रयोगशालाओं से बीज में जीवन नहीं डालते। वे बीज को चूर-चूर कर सकते है, परन्तु वे बीज को फिर से इकट्ठा करके इसमें जीवन नहीं डाल सकते। मनुष्य बीज की नकल नहीं कर सकता या इसे नये सिरे से नहीं बना सकता।

इसके अलावा, चाहे हम जितनी भी कोशिश कर लें, हम बाइबल के जैसी कोई दूसरी पुस्तक नहीं लिख सकते जिसमें सच्ची प्रेरणा, दोष रहित यथार्थता और भविष्य का सिद्ध दर्शन है। ईश्वरीय लेखक, पवित्र आत्मा, जिसने इसे लिखवाया; और यह तथ्य इसे अनादि शक्ति देता है जो पृथ्वी पर किसी दूसरी पुस्तक में नहीं है। यीशु ने कहा, ''आकाश और पृथ्वी टल जाएंगे, परन्तु मेरी बातें कभी न टलेंगी'' (मत्ती 24:35)। किसी दूसरी पुस्तक में यीशु के ईश्वरीय वचन नहीं हैं। उसके लिए, पतरस के साथ हम कह सकते हैं, ''हे प्रभु, हम किसके पास जाएँ? अनन्त जीवन की बातें तो तेरे ही पास हैं'' (यूहन्ना 6:68)।

उद्धार, व्यावहारिक जीवन जीने और अनन्त जीवन से सम्बन्धित सभी प्रश्न इसी एक बुनियादी सवाल पर आ टिकते हैं कि ''परमेश्वर के वचन अर्थात पवित्र आत्मा के बीज का हम क्या करें?''

चेला और वचन (4:21-25)

पहली बार चाहे न लगे, परन्तु 4:21-25 चेले के जीवन में परमेश्वर के वचन के बारे में है। अध्याय 4 के आरम्भिक भाग में यीशु अपने चेलों और प्रेरितों को खेत की अलग-अलग मिट्टी के बीज को ग्रहण करने के बारे में बताते हुए उपदेश दे रहा था। वह इतना हठी था कि उन्हें लगा जो दृष्टांत उसने दिया था, इसे विस्तार से समझाया जाना आवश्यक है। उसने इस दृष्टांत का इस्तेमाल दूसरे दृष्टांतों को जो उसने भविष्य में देने थे, उन्हें समझाने के लिए कुंजी के रूप में किया। अलग प्रकार की भूमि के अपने दृष्टांत के बीच में उसने एक संक्षिप्त चर्चा डाल दी कि वह अपने प्रचार में दृष्टांतों का इस्तेमाल क्यों कर रहा है। इन तीन में से दो वार्तालापों में उसने सही किस्म के मन के साथ वचन को ग्रहण करने के महत्व पर ज़ोर दिया।

पवित्र आत्मा की ओर से हमें दिए गए बड़े-बड़े दानों में से एक दान परमेश्वर के वचन का है। आइए उन उदाहरणों के द्वारा जिनका इस्तेमाल यीशु ने किया, इस तथ्य पर और विचार करते हैं। आइए हम अपने मनों से पूछें, ''हमारे लिए क्या वचन है और हमें इसका इस्तेमाल कैसे करना चाहिए?''

1. यीशु हमें ''दीये'' के रूपक के द्वारा दिखाना चाहता है कि वचन *सुनाया जाने*

वाला संदेश है। उसने कहा, "क्या दीये को इसलिये लाते हैं कि पैमाने या खाट के नीचे रखा जाए? क्या इसलिये नहीं कि दीवट पर रखा जाए?" (4:21)। उसने दो नकारात्मक और एक सकारात्मक प्रश्न का इस्तेमाल किया। तीनों प्रश्न व्यावहारिक, पारिवारिक आधारित बातों से सम्बन्धित हैं। दीये का क्या करते हैं? पहले, क्या कोई इसे पैमाने या टोकरे के नीचे रखता है? बेशक नहीं। दूसरा, क्या कोई इसे खाट के नीचे रखता है? यह बेतुका होना था। तीसरा, क्या कोई इसे दीवट पर रखता है? वास्तव में, उस ज़माने में सही उत्तर यही था। अंधेरे में रौशनी करने को छोड़ दीया और किस काम आता होगा?

हमें ईश्वरीय प्रकाशन दिया गया है, परन्तु हम इसका क्या करें? क्या हम इसे दूसरों से छिपा लें? क्या हम इसे ढककर रख लें ताकि दूसरे इसका इस्तेमाल न कर पाएं? बेशक नहीं! इसके बजाय हमें पुलपिट पर, हर बातचीत में, हर पुस्तक में, हर जगह जहां भी लोग हों, को इसे रखना आवश्यक है। हमारे उद्धारकर्त्ता की बातों का यही अर्थ है। दीये का यही उद्देश्य है और ईश्वरीय वचन का यही उद्देश्य है। हम में से जिन लोगों के पास यह है उनका काम यह है कि वह यह सुनिश्चित करें कि यह वचन हमारे साथ के दूसरे लोगों तक भी पहुंचे। यीशु के अनुसार, जिन लोगों को यह आशीष मिली है, उनका यह कर्त्तव्य बनता है कि वे यह सुनिश्चित करें कि दूसरों को भी यह आशीष मिले।

2. दूसरा, 4:22 में यीशु ने एक भेद का संकेत दिया। उसने कहा, "क्योंकि कोई वस्तु छिपी नहीं, परन्तु इसलिये है कि प्रगट हो जाए; और न कुछ गुप्त है, पर इसलिये है कि प्रगट हो जाए।" वह एक *भेद के प्रकट होने* की बात कर रहा था। कालांतर में कुछ बड़ी सच्चाइयां छिपी हुई थीं। नबियों को उन बातों का जिनकी वे भविष्यद्वाणी कर रहे होते थे, सारा विवरण मालूम नहीं होता था। पतरस के अनुसार वे उन बातों के विषय में जिन्हें वे बता रहे होते थे और ज्ञान पाना चाहते थे (1 पतरस 1:10, 11)। यीशु ने अपने चेलों को बताया कि यदि वे उसके साथ रहते तो उन्हें उन भेदों को समझने का अवसर मिलना था। यानी जो छिपा हुआ था वह प्रकट होने होने वाला था।

यीशु की पृथ्वी की सेवकाई, मृत्यु, पुनरुत्थान, स्वर्गारोहण, कलीसिया के आने, नये नियम के पूरा होने के द्वारा परमेश्वर की बड़ी सनातन मंशा प्रकट की गई है। इस संसार और मसीही युग के लिए परमेश्वर की ईश्वरीय इच्छा के सभी भाग अब हमारे सामने रख दिए गए हैं। प्रेरित उस प्रक्रिया के बिल्कुल बीच में थे। पहली सदी के उसके विश्वासी अनुयायी भी उनकी तरह ही थे; ताकि आने वाले युगों में उसके विश्वासी अनुयायी पवित्र शास्त्र के आज्ञाकार बनकर उस ज्ञान के बहाव का भाग बन सकें।

हमें कितना वफ़ादार उद्धारकर्त्ता मिला है! वह अपने चेलों को इस बात में अंधकार में नहीं रखता है कि वह क्या करने वाला है और उसके कामों का अर्थ क्या होगा। यीशु ने अपने चेलों को संदेह के गुबार में नहीं रहने देना चाहा। उसने उन्हें बताया, "मैं ने ये बातें तुम से इसलिये कहीं हैं कि तुम्हें मुझ में शान्ति मिले। संसार में तुम्हें क्लेश होता है, परन्तु ढाढ़स बाँधो, मैं ने संसार को जीत लिया है" (यूहन्ना 16:33)। यीशु ने अपने चेलों को जो कुछ वे कर रहे थे, उसका केवल अस्पष्ट विचार देकर शहीद हो जाने के लिए नहीं भेज दिया।

3. इसके अलावा यीशु ने उन्हें उसकी सुनने के महत्व को याद दिलाया। जैसा कि उसने

पहले कहा था, उसने फिर कहा (देखें 4:9), ''यदि किसी के सुनने के कान हों, तो वह सुन ले'' (4:23)। ''कान'' की बात करने के साथ उसने अपने चेलों को *पूरा की जाने वाली जिम्मेदारी* के बारे में समझाया। संक्षेप में, वह कह रहा था, ''उन लोगों के रूप में जिन्होंने सुना है, अब तुम्हारे कंधों पर एक बड़ी जिम्मेदारी है। अब तुम्हें यह सुनिश्चित करना है कि जो तुमने सुना, उसे, समझो और मानो; और तुम्हें यह सुनिश्चित करना होगा कि जो संदेश मैंने तुम्हें दिया है, तुम इसे दूसरों को भी दो।''

यीशु उनके साथ उस सबसे बड़े विषय के बारे में बात कर रहा था जिस पर मानवीय सोच चिंतन कर सकती है और वह विषय अनन्त जीवन का है। परमेश्वर के पुत्र के उन्हें इसे समझाते हुए कि यह क्या है, इसे कैसे ग्रहण करना है और इसमें कैसे रहना है, इतना निकट होने की आशीष मिली थी। इससे बढ़कर और आदर क्या हो सकता था? फिर भी पुराने और नये नियम के रूप में जिल्द-बंद हमारी समझ में आने वाला पवित्र शास्त्र हमारे हाथ में है। यह हमारे मनों पर ईश्वरीय जिम्मेदारी डाल देता है। क्या पृथ्वी पर किसी और व्यक्ति पर इतना अनुग्रह रहा है जितना उसके चेलों पर, जो पवित्र शास्त्र की पहुंच में रहे? हमें जो इस संसार में रहते हैं जो वह कर रहा है, जो उसकी योजना है और जहां वह हमें ले जाने वाला है, के ज्ञान का दान देने से बढ़कर परमेश्वर हमें और क्या दे सकता है?

4. 4:24, 25 में यीशु ने *अवसर का लाभ उठाने* का विचार देते हुए माप की बात की। उसने कहा,

> ''चौकस रहो कि क्या सुनते हो। जिस नाप से तुम नापते हो उसी से तुम्हारे लिये भी नापा जाएगा, और तुम को अधिक दिया जाएगा। क्योंकि जिसके पास है, उसको दिया जाएगा; और जिसके पास नहीं है, उससे वह भी जो उसके पास है, ले लिया जाएगा।''

अलग-अलग समयों में यीशु ने इस बात पर ज़ोर दिया कि हम ध्यान रखें *कि हम* सुनते हैं (4:9), ध्यान रखें कि *क्या* सुनते हैं (4:24), और ध्यान रखें कि *कैसे* सुनते हैं (लूका 8:18)।

4:24 में एक सच्चाई यह बताई गई है कि हम केवल यीशु के संदेश को सुने, और हम यह सुनिश्चित करें कि हमें उस संदेश में बढ़ने के महत्व की समझ है। बाइबल में हम जितना चाहे उतना गहराई तक जा सकते हैं। वास्तव में जितना हम गहरा जाएंगे उतनी ही हमें अधिक आशीष मिलेगी। यदि हम केवल दो या तीन आयतें सीखकर और थोड़ा सा ज्ञान पाकर संतुष्ट हो जाते हैं, तो हमारी उन्नति होना मुश्किल है। समय बीतने पर हम असल में उससे जो हमारे पास है पीछे हटकर, उसे खो सकते हैं। यदि किसी ने अपने एक हाथ का इस्तेमाल कभी न किया हो तो एक दिन ऐसा आ सकता है जब वह हाथ काम करना बंद कर दे। बढ़ना जीवन का स्वाभाविक हिस्सा है। कोई उन्नति न होने का अर्थ आम तौर पर यही होता है कि उसमें प्राण नहीं है। जब कोई उन्नति नहीं होती है, तो हमें वह भी भूल जाता है जो हमें पता होता है। मसीही व्यक्ति चाहे वह प्रचारक हो या शिक्षक, यदि वह सीखते रहकर बढ़ना नहीं है तो वह मर जाता है।

निष्कर्ष: वास्तव में जब हम उन दानों को जो पवित्र आत्मा की ओर से हमें दिए गए हैं, सोचते हैं तो बाइबल उनमें सबसे ऊपर आती है। इस अर्थ में यीशु की चारों बातें वास्तविक चेला बनने के समीकरण के साथ मेल खाती हैं।

बाइबल का हमारे लिए क्या अर्थ है? यह पक्की बात है कि यह एक भेद है, जिसे प्रकट कर दिया गया है। जब हम इसे पढ़ते हैं, इस पर मनन करते हैं, और इसे अपने अंदर सोख लेते हैं, तो परमेश्वर की योजना जो कि उसकी सनातन मंशा है, हमारे अंदर और स्पष्ट होती जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि हमारे लिए इस अवसर का लाभ उठाना आवश्यक है। संसार में बहुत कम लोग हैं जिनके पास हमारे उद्धारकर्त्ता के वचन में बने रहने के योग्य बनाने के लिए समय, पहुंच और संसाधन हों। प्रकट किए गए भेद और इस अवसर का पीछा करके हमें इसका लाभ उठाना सचमुच में निभाए जाने वाली जिम्मेदारी और बताया जाने वाला संदेश है। ईनाम की चीज़ तब तक किसी काम की नहीं होती जब तक उसे बांटा न जाए। हम मिशनरी बनना चुनते नहीं हैं; हम चेले बनना चुनते हैं; और जब हम इस पसन्द को चुन लेते हैं, तो दूसरी पंसदें इसी में समा जाती हैं। इन पसंदों में से एक पसंद उसके यानी एलची बनना है जो दूसरों को बताए कि उसके इस संदेश का उनके लिए क्या अर्थ हो सकता है।

इसलिए, हमारे उद्धारकर्त्ता की योजना में चार आवश्यक बातें हैं: संदेश को सुनो, इसे समझो, इसे मानो, और इसे दूसरों को बताओ। हम उसके पास उसके वचनों के द्वारा आते हैं, वह हमें अपने शिक्षाओं के द्वारा पिता के पास ले जाता है और वह और उसका पिता हमें अपना संदेश देकर दूसरे लोगों को जितने भी उसके पास आ सकें, उन्हें लाने के लिए भेजता है।

परमेश्वर, जीवन और बीज (4:26-29)

सुसमाचार के मरकुस के विवरण में बीज के बढ़ने का यीशु का दृष्टांत अनूठा है। 4:26-29 वाला दृष्टांत उन दृष्टांतों में से जिनमें विशेष तौर पर अलग-अलग भूमि और बीज पर ज़ोर दिया गया है, तीसरा है। पहला दृष्टांत, जो कि बोने वाले का दृष्टांत है (4:1-20), भूमि की उस किस्म पर आधारित जिसमें बीज गिरता है। दूसरा दृष्टांत, जो कि जंगली बीज का दृष्टांत है (देखें मत्ती 13:24-30), किसी शत्रु के कथानक को दिखाता है जिसने रात के समय खेत में निकम्मा बीज बो दिया। उस दृष्टांत में बोने और काटने के विचार हैं परन्तु इसमें यह नहीं बताया गया कि बीज वास्तव में भूमि में उगता कैसे है। परन्तु बढ़न का यह दृष्टांत इस बात पर ध्यान देता है कि बोने के समय और काटने के समय बीज का क्या हुआ। मूल में, यह हमें उस दृश्य के पीछे ले जाता है कि बोने वाला क्या करता है और ध्यान दिलाता है कि भूमि के अन्दर बीज में प्राण आने पर परमेश्वर बीज के साथ क्या करता है।

इस कारण यह दृष्टांत यह समझाते हुए कि परमेश्वर बीज के साथ क्या करता है, हमारे अंदर परमेश्वर के कामों की समझ डालता है। इस दृष्टांत का कोई भी अध्ययन प्रकृति के संसार में और आत्मा के संसार में परमेश्वर के काम करने पर थोड़ी चर्चा होनी आवश्यक है।

अच्छी तरह से जोते गए खेत में बोने के अपने काम को पूरा करते हुए बोने वाले को देखने की कल्पना करते हैं। हम अपने मन में कहते हैं, ''अब आगे क्या होगा? अंकुरण कैसे होगा? उन सब बीजों के साथ जो भूमि में गिरे, परमेश्वर का हाथ क्या करेगा?'' अपने सारे अर्थों के साथ यह दृष्टांत हमारे हर प्रश्न का उत्तर देगा। परन्तु इन सभी प्रश्नों को एक बड़े प्रश्न में सक्षिप्त किया जा सकता है कि ''परमेश्वर बीज को बढ़ाता कैसे है?''

1. भूमि में बीज के बढ़ने पर विचार करते हुए हमें यह समझ में आ सकता है कि इन

प्रक्रियाओं में बिल्कुल *जटिल बढ़ोतरी शामिल है।* काफ़ी देर तक ऐसा लगेगा कि खेत में कुछ नहीं होने वाला। हमें ऐसा लगेगा कि बीज बढ़ नहीं रहा है। फिर दिन रात के समय उस पर मिट्टी में से अंकुर का कोमल सा रूप धूप में से निकलता है। उस अंकुर के भूमि में से निकलने पर, यह हमारे पर चिल्लाता नहीं है परन्तु चिल्ला चिल्ला कर हमारा ध्यान खींचता है। यह बढ़ना धीर धीरे और कुछ चरणों में होता है कि हमें पता भी नहीं चलता। हमें इसे बड़े ध्यान से देखना आवश्यक है।

जैसे एक मां अपने नन्हें बालक को देखकर शोर मचाते हुए कहती है, ''मैं बताती हूं! तू बड़ा हो गया है!'' पौधे के साथ कुछ ऐसा ही होता है। किसान अपने खेत पर नज़र डालता है और हरे हरे अंकुरों की एक बड़ी सी चादर दिखाई देती है। उसके चेहरे पर मुस्कान आ जाती है और वह मन ही मन कहता है, ''मेरी फसल निकल आई है, मेरा खेत हरा भरा हो गया है।''

हमें कई बार यह लग सकता है कि परमेश्वर खामोश है और हमारे लिए, हमारे अंदर या हमारे द्वारा अब काम नहीं कर रहा है। शायद हमने बिना कोई तुरन्त जवाब देखे प्रार्थना की हो। ऐसे समय में याद रखें कि परमेश्वर हर समय व्यस्त होता है, तब भी जब लगे कि वह काम नहीं कर रहा है। जो कुछ नज़र से बाहर हो रहा होता है, हमारी गतिविधियों के वह पीछे काम कर रहा होता है।

आत्मिक मामलों के सम्बन्ध में हम आम तौर पर उस छोटे बच्चे की तरह हो सकते हैं जो एक दिन एक बीज बोता है और अगले दिन यह देखने के लिए कि उस बीज का क्या हुआ, बाहर जाकर उसे खोद देता है। परमेश्वर के ईश्वरीय प्रबन्ध के काम करने के द्वारा, मिट्टी में वह छोटा बीज अंकुरित हो रहा है हम इसे सुने या न, देखे या न, या समझे या न। इस छोटे बीज में धीरे-धीरे और खामोशी से परमेश्वर की योजना के अनुसार प्राण डाला जा रहा है। हम परमेश्वर के साथ बेताब न हों; क्योंकि जिस प्रकार से वह बीज के उगने और कटाई में विश्वासयोग्य है (उत्पत्ति 8:22), वैसे ही वह हमारे साथ काम करने और हमारे संघर्षों में हमारी सहायता करने में वफ़ादार होगा, हम चाहे उस हाथ को देख पाए या न।

2. बीज *निरन्तर और धीरे-धीरे बढ़ता है*। ऐसा नहीं होता है कि किसान आज बीज को बोए और अगले दिन उसे काट ले। एकदम से बढ़ना खराब बात है। अच्छी फसल के बढ़ने में छह हफ्ते लग सकते हैं। किसान को धीरज से प्रतीक्षा करनी आवश्यक है क्योंकि ''पृथ्वी ... फल लाती है, पहले अंकुर, तब बाल, और तब बालों में तैयार दाना'' (4:28)।

पूरी तरह से वास्तविक बढ़ना धीरे-धीरे, निरन्तर और नियमित रूप से होना आवश्यक है। हां, मनपरिवर्तन ऐसी चीज़ है जो उसके विपरीत तुरंत और निर्णायक ढंग से होता है। व्यक्ति विश्वास करने, परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने के लिए मन फिराने के लिए देने, यह अंगीकार करने कि यीशु ही मसीह है और मसीह में बपतिस्मा लेने के लिए अपने आपको निश्चय करता है। उसे तुरन्त क्षमा करके, धर्मी ठहराया जाता और मसीह की देख रेख में लाया जाता है। फिर भी मसीह में बढ़ना, यीशु के स्वरूप में आकार लेना, शेष जीवन पर होता रहता है। प्रत्येक वर्ष के अंत में हम उन महीनों की ओर पीछे की ओर देखकर देख सकते हैं कि हमने कितनी तरक्की की है। मसीह के पूरे स्वरूप में ढलने में हमारा सफ़र हो सकता है कि कई बार टेड़ा मेड़ा, ऊबड़ खाबड़, दायें बायें हो जाए। यह कभी सीधी रेखा में नहीं होता। बड़ी बात यह है कि तरक्की या

बढ़ौती हो रही है। ऊपर की ओर बाहरी यात्रा निरंतर हो रही है। बढ़ोतरी धीरे-धीरे परन्तु हो रही है; यह नियमित रूप में और निरंतर होती है।

3. काफी समय बीत जाने के बाद बीज की डालियां बड़ी हो गईं और यह सम्पूर्ण और परिपक्व होने की ओर बढ़ रहा है। कटनी का समय निकट आ रहा है। दृष्टांत कहता है, ''परन्तु जब दाना पक जाता है, तब वह तुरन्त हँसिया लगाता है, क्योंकि कटनी आ पहुँची है'' (4:29)। बीज डाली के रूप में तब तक बढ़ता रहता है जब तक पूरी फसल किसान का अनाज देने को तैयार नहीं होती। फसल की कटाई तभी हो सकती है जब अनाज की बालियां पक चुकी हों।

बीज भूखे के लिए भोजन उपलब्ध करवाकर और अन्य समयों के लिए बोने के लिए और बीज बढ़ाकर अपना काम पूरा करते हैं। परमेश्वर कुछ भी या किसी को भी अकेले के लिए रहने के लिए नहीं बनाता। उसने सेब में इतना बीज डाल दिया है कि वह अपने से कई गुणा और उपजा सकता है। सेब बीज उत्पन्न करने के लिए रहता है जो सेब के पेड़ बनकर जीवन के लिए पोषण दे सकें।

इसी प्रकार से अपने हर चेले के लिए यीशु की यह इच्छा है कि वह फल देने वाले चेले में बदले। उसने बताया, ''जो डाली मुझ में है और नहीं फलती, उसे वह काट डालता है; और जो फलती है, उसे वह छाँटता है ताकि और फले'' (यूहन्ना 15:2)। पवित्र आत्मा सामान्य मसीही में वास करता है, और समय बीतने के साथ, आत्मा, उसके अंदर आत्मा का फल बनाता है: ''... प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, कृपा, भलाई, विश्वास, नम्रता, और संयम; ...'' (गला.द्व 5:22, 23)।

4. अंतिम बात जो अब कही जानी आवश्यक है वह दृष्टांत का सबसे महत्वपूर्ण नियम है। बीज एक *ईश्वरीय, परमेश्वर की ओर से दी गई बढ़ोतरी* को दिखाता है। यदि परमेश्वर का अनुग्रहकारी हाथ न रहा होता तो बीज बढ़ नहीं सकता था।

बोने वाले की सहायता के बिना बीज फूटकर उग जाता है और उसकी जानकारी से बिल्कुल परे बढ़ता है। बीज में अपने आप में परमेश्वर की ओर से दी गई ऊर्जा है यानी उसके अपने अंदर जीवन और प्राण है, ताकि वह बढ़ सके। हमारे लिए यह याद रखना आवश्यक है कि बीज के अंदर परमेश्वर की दी हुई जीवन की चिंगारी है।

एक समय आता है जब बोने वाले की जिम्मेदारी खत्म हो जाती है। फसल देने का जिम्मा उसे परमेश्वर और बीज पर छोड़ देना होता है। यहूदी लोग प्रकृति के संसार को वैसे कभी नहीं करते थे जैसे हम कहते हैं। वे इस संसार में होने वाले हमारे आस पास के सभी नियमों को परमेश्वर का काम बताते हैं। उनके अनुसार वर्षा ''प्रकृति'' के कारण नहीं, बल्कि परमेश्वर के कारण होती है। बीज को वफ़ादारी से बो देने के बाद किसान के लिए जीवन की उस ऊर्जा यानी परमेश्वर द्वारा दी गई बात जो उसके अंदर है, विश्वास रखना आवश्यक है। और उसे अपने कामकाज को करते रहकर बढ़ने के काम को परमेश्वर पर छोड़ देना आवश्यक है। बीज को वह समय दिया जाना आवश्यक है जो इसे बढ़ने के लिए चाहिए। परमेश्वर को वह समय दिया जाना आवश्यक है जो उसने उस बीज के बढ़ने के लिए ठहराया हुआ है। बढ़ना धीरे-धीरे हो सकता है, परन्तु यह बढ़ता अवश्य है। अंकुर पौधा बनता है और पौधा बड़ा होता है, मौसम की मार झेलने वाला पेड़ बन जाता है।

निष्कर्ष: जीवन की सबसे कठिन चुनौतियों में से एक परमेश्वर की ओर देखना है, परन्तु इस दृष्टांत में हमने देखा है कि परमेश्वर की राह देखना जीवन के लिए सार्थक है। बीज डाली बनना चाहता है; परन्तु इसे रुकना पड़ेगा, क्योंकि डाली रातो रात बड़ी नहीं होती। लड़का आदमी बनना चाहता है; परन्तु उसे रुकना होगा, क्योंकि लड़के के आदमी बनने में कई साल लग जाते हैं।

उस पुस्तक के अंत में जो अय्यूब के नाम से है परमेश्वर ने उसे बताया कि वह उसे बता सकता है कि धर्मियों पर दु:ख क्यों आते हैं; परन्तु यदि वह बता देता, तो अय्यूब को यह समझ नहीं आना था कि वह क्या कह रहा है। परमेश्वर ने उसे संकेत दिया कि यदि वह उसे बता देता, तो अय्यूब को उसका उत्तर समझ में नहीं आना था। जीवन इतना जटिल है। अय्यूब को बताया गया कि परमेश्वर में भरोसा रख, परमेश्वर की राह देख, और जीवन के नियमों को अपनी परिस्थिति में लागू कर। अय्यूब की पुस्तक से यह स्पष्ट है कि इस धर्मी जन को सबक मिल गया और उसने वही किया जो परमेश्वर ने उसे करने को कहा।

बीज के बढ़ने के यीशु के दृष्टांत में हमारे लिए ज़दर्बस्त सबक हैं। यह हमें याद दिलाता है कि मसीही परिपक्वता में बढ़ने की प्रक्रिया बीज के बढ़ने के जैसी है। यानी यह चुपके से और सूक्ष्म ढंग से, निरंतर और नियमित रूप में सम्पूर्णता और सिद्धता की ओर बढ़ती रहेगी; और यह बढ़ोतरी जीवन की उस चिंगारी के द्वारा होती रहेगी जो पवित्र आत्मा ने हमारे अंदर डाली है। जो व्यक्ति मसीही बन जाता है वह अकेला नहीं चलता; वह परमेश्वर के वचन के द्वारा पवित्र आत्मा की सामर्थ में चलता है। वह नये जीवन में आ जाता है; यीशु के पुनरुत्थान की सामर्थ के द्वारा वह "निशाने की ओर दौड़ा चल जाता (है) ताकि वह ईनाम पाए जिसके लिए मसीह ने उसे ऊपर बुलाया" (फिलि. 3:14)। जीवन की कहानी और मसीही की कहानी को "बीज," "बढ़ना," "परिपक्वता" और "कटनी" के इन चार शब्दों में समझाया जा सकता है।

सबसे छोटे से सबसे बड़े तक (4:30-32)

अपने चेलों से वह प्रश्न पूछकर जो निश्चित रूप में उनके मनों पर था, हमारे प्रभु ने उनका ध्यान आकर्षित किया होगा। वह उनसे पूछ रहा था, "हम परमेश्वर के राज्य को कैसे दिखाएं, या इसे दर्शाने के लिए कौन सा दृष्टांत है ?" उन्होंने उसे राज्य की बात करते हुए सुना था और जानते थे कि उसके लिए यह महत्वपूर्ण था। अब वह उन्हें इसे और अच्छी तरह से समझाना चाहता था। उपयुक्त रूपकों और विवरणों का इस्तेमाल करते हुए उसने उन्हें इसकी कल्पना करने में सहायता करनी चाही। इस बात को समझते हुए कि "दृष्टांत" के रूप में वह क्या करने वाला था, वह एक स्पष्ट तुलना करने लगा जिससे आने वाले राज्य की मुख्य बात उनके दिमाग में चली जानी थी।

ये चेले स्तब्ध हो गए होंगे जब उनके स्वामी और प्रभु ने कहा, "यह राई के दाने के समान है।" राई का दाना सब बीजों में छोटा माना जाता था। राज्य को काली मिर्च के कण के आकार से कैसे मिलाया जा सकता था ? निश्चय ही यीशु ने उनका ध्यान खींचा था। इस रूपक के साथ, उसने हमारा भी ध्यान खींचा है। है न ?

हर दृष्टांत में केवल एक सबक है जो यह देना चाहता है, चाहे उनसे आसानी से और प्वायंट निकाले जा सकते हैं। इस दृष्टांत में निश्चित रूप में मुख्य सच्चाई राज्य के आरम्भ में छोरा होने की है। हमारे प्रभु की सेवकाई से बहुत पहले, दानिय्येल ने पेशनगोई की थी कि यह राज्य

अनन्तकाल तक रहना था। उसने एक राज्य की बात की "जो अनन्तकाल तक न टूटेगा" और उसने कहा, "न वह किसी दूसरे हाथ में न रहेगा वरन वह उन सब राज्यों को चूर-चूर करेगा और उनका अंत कर डालेगा; और वह सदा स्थिर रहेगा" (दानिय्येल 2:44)। परन्तु यहां पर यीशु ने अपने चेलों के सामने इसके आरम्भ में छोटा होने का इशारा किया। यीशु ने कहा कि "राई का दाना चाहे सब बीजों से छोटा होता है" परन्तु इसने उसके आने वाले राज्य के जैसा होना था। आइए उस अनन्त राज्य के इस छोटे से आरम्भ पर ध्यान से गौर करते हैं। यीशु ने यह दृष्टांत प्रोत्साहित करने के लिए दिया इसलिए हम इसे "आशा का दृष्टांत" कह सकते हैं।

1. इस राज्य ने किसके जैसा होना था? एक विशेषता यह है कि इसने *शुरू में प्रसिद्धि में छोटा होना था परन्तु इसकी विश्वव्यापी प्रसिद्धि बढ़ जानी थी*। मसीहा के सांसारिक माता-पिता यूसुफ़ और मरियम छोटे से गांव से थे। जोसेफ़स ने कहा कि गलील में 240 गांव थे,[45] परन्तु उसने नासरत का उल्लेख नहीं किया। संसार के लिए नासरत एक अज्ञात स्थान था। विश्व मंच पर यूसुफ़ और मरियम मामूली लोग थे। बैतलहम में यीशु के जन्म की ओर रोमी साम्राज्य के अधिकतर बड़े-बड़े लोगों ने ध्यान नहीं दिया। यीशु की देखभाल एक ऐसे दम्पत्ति ने की जिसका आरम्भ में कोई वास्तविक घर नहीं था। मिस्र से लौटने के बाद, यूसुफ़ और मरियम नासरत में चले गए जहां पृथ्वी की अपनी सेवकाई का आरम्भ होने तक यीशु गुमनामी में रहा।

राई के दाने की बात करते हुए यीशु चेलों से कह रहा था, "तुम इस बात से निराश मत हो। आरम्भ में राज्य छोटा ही होगा, परन्तु यह तेजी से बढ़ेगा और एक दिन सारे संसार को प्रभावित करेगा।"

इस्राएल के लिए अपने नेतृत्व का आरम्भ मूसा ने भी ऐसे ही किया था। परमेश्वर द्वारा उसे जलती हुई झाड़ी में से नबी बनने के लिए बुलाए जाने के समय वह केवल एक अज्ञात चरवाहा था। परन्तु परमेश्वर ने उसे दासों की सेना में से एक जाति बनाने के लिए तैयार किया, नियुक्त किया, उसे शक्ति दी और उसे मिस्र में भेजा। जब वह मिस्र में से निकले, तो वे 2,500,000 बलवान लोग थे।

ऐसा लगता है कि परमेश्वर अज्ञात लोगों को लेकर उन्हें विश्व प्रसिद्ध लोगों में बदलने का आदी है जो उसके लोगों को संसार को बदलने वाली लहरों में ले जा सके। वह उन्हें इब्रानियों 11 में बताए गए विश्वासियों में लाकर उनके विश्वास और विजय से अनचले मार्गों पर ले आता है।

2. यह कैसा राज्य होना था? इसने *आरम्भ में संख्या में छोटा* होना था, *परन्तु शीघ्र ही यह एक विश्वव्यापी परिवार बन जाना था*। यूहन्ना बपतिस्मा देने वाला यीशु का केवल एक ही हरकारा था। अपने प्रचार के द्वारा मसीहा के लिए मार्ग तैयार करते हुए उसकी सेवकाई शायद एक वर्ष की थी। वह यह प्रचार कर रहा था, "तैयार हो जाओ, क्योंकि मसीहा आ रहा है!"

यीशु ने अपनी सेवकाई पलिश्तीन के छोटे से राज्य में की। संसार के दृष्टिकोण से उसके बहुत कम अनुयायी थे। चाहे भीड़ उसके आस पास रहती थी परन्तु उसके प्रचार से कई बार वे भाग जाते थे (देखें यूहन्ना 6:66)। उसने अपने प्रशिक्षु बनने के लिए बारह पुरुषों को बुलाया और उनका उस्ताद बनने और उन्हें सिखाने का बीड़ा उठाया ताकि वे उसके राज्य की उसकी योजनाओं में शामिल हो सकें।

हम छोटी छोटी बातों की उपेक्षा न करें। जब गिदोन को परमेश्वर के लोगों को छुड़ाने के

लिए बुलाया गया तो उसने इस निमन्त्रण को संदेह और अविश्वास से देखा। चुनौती स्वीकार करने के बाद उसने 32,000 पुरुषों को भर्ती कर लिया; परन्तु परमेश्वर ने कहा, ''यह बहुत ज्यादा है।'' उसकी सेना को कम करके 10,000 तक और फिर इससे भी कम 300 सिपाहियों तक लाया गया (न्यायियों 7:2-8)। परन्तु परमेश्वर ने विश्वासी लोगों की इस छोटी सी टुकड़ी को अद्‌भुत विजय दिलाई।

परमेश्वर का तरीका यही रहता है। यीशु ने अपने साथ प्रचार करने के लिए बारह पुरुषों को चुना। इस छोटी सी शुरुआत के साथ उसने राज्य के आने की तैयारी की। राई के बीज का रूपक इस्तेमाल करते हुए यीशु ने कहा कि उसका राज्य बढ़कर संसार के सबसे बड़े अंदोलनों में से एक बन जाना था (4:32)।

3. आरम्भ में, यह राज्य *अपने सांसारिक अर्थ में छोटा* होना था, *परन्तु इसने अनन्त और स्वर्गीय राज्य बन जाना था*। इसके आरम्भ में इसमें सेना, बड़ा सामान खजाना या बड़ी सम्पत्ति नहीं थी। केवल एक आदमी (मनुष्य का पुत्र) चलते हुए राज्य के अपने सिद्धांत बताते हुए लोगों में रह रहा था। उसकी मृत्यु और पुनरुत्थान के बाद, पिन्तेकुस्त वाले दिन राज्य का आरम्भ हुआ। जब तीन हज़ार लोग इसका भाग बन गए (प्रेरितों 2:41)। उस लाँच पैड से, सदियों से यह जैसा कि आज यह है, संसार को बदलने वाला बन गया।

निष्कर्ष: क्या मसीही लोगों को कोई उम्मीद है। यीशु ने हमें बताया कि उसके राज्य में उम्मीद है। इसका आरम्भ बड़ा छोटा था अब इसमें परमेश्वर के प्रेम से कोमल की कोमल से कोमल उद्धार दिलाने वाली वर्षा के साथ सारी पृथ्वी को ढंक लिया है। दानिय्येल ने इस संसार को कहा था कि यह राज्य संसार को हिला देगा, और उसने हिला दिया है। यह संसार को हिला देता है, परन्तु संसार से हिलता नहीं है। इब्रानियों 12:28 कहता है, ''... हम इस राज्य को पाकर जो हिलने का नहीं कृतज्ञ हों, और भक्ति, और भय सहित, परमेश्वर की ऐसी आराधना करें जिससे वह प्रसन्न होता है।''

हर कोई जो इस राज्य में प्रवेश करता है सच्चाई और प्रेम के अनन्त राज्य का भाग बन जाता है। इससे सुरक्षित, शुद्ध या अधिक सराहने योग्य जगह कोई और नहीं है। इस राज्य की सुनहरी चार दिवारी में लोग और परिवार विश्राम पाते हैं, क्योंकि यह सच्ची आशा और उद्धार का ठिकाना है।

सिखाने की यीशु की शैली (4:33, 34)

मरकुस के आत्मा की अगुआई से यीशु द्वारा बताए गए तीन दृष्टांतों को एक एक करके बताने के बाद उसने यीशु द्वारा इस्तेमाल की गई शिक्षा की शैली को संक्षेप में बताना चुना। अपने चेलों और भीड़ के साथ अपना संदेश देने के यीशु के ढंग के इस विवरण के अंदर सिखाने के उच्चतम रूप की बानगी के गुण मिलते हैं। यीशु की सिखाने की शैली के ये कुछ शब्द हमें अच्छे शिक्षकों को जिन्होंने लोगों के जीवनस्तर को ऊंचा उठाने के लिए संसार भर की कक्षाओं में ईमानदारी से काम किया है, याद करने की चुनौती देता है।

शिक्षक से बढ़कर लोगों पर शायद कोई और प्रभाव नहीं डाल सकता। बहुत कम लोग होंगे जो कह सकते हों, ''मुझे किसी गुरु ने कभी प्रभावित नहीं किया है।'' हम में से अधिकतर

लोग कभी न कभी शिक्षक के प्रभाव में रहे हैं। संसार भर में लोगों को भलाई या बुराई के लिए शिक्षकों के सामर्थ से भरे शब्दों के द्वारा आकार दिया जा रहा है।

मरकुस 4:33, 34 की बातों के आधार पर, आइए यह सवाल पूछें, ''अच्छा शिक्षक बनने के लिए क्या आवश्यक है?'' इस प्रश्न को दूसरे ढंग से कहें, ''अच्छा शिक्षक अपने काम में सचमुच में प्रभावशाली होने के लिए सिखाने का काम कैसे करता है?'' सिखाने की तकनीकों के सम्बन्ध में, यीशु के सिखाने की शैली को देखने और नमूने के रूप में इसके इस्तेमाल से बढ़कर और कोई लक्ष्य नहीं हो सकता। यीशु कैसे सिखाता था और हमें कैसी शिक्षा देने की इच्छा करनी चाहिए?

1. मरकुस ने यीशु के सिखाने के अपने वर्णन का आरम्भ उसके *तरीकों* की ओर ध्यान दिलाते हुए किया। मरकुस ने कहा कि उसके सिखाने का ढंग, दृष्टांतों का इस्तेमाल करने का था: ''वह उन्हें इस प्रकार के बहुत से दृष्टान्त दे देकर उनकी समझ के अनुसार वचन सुनाता था'' (4:33)। बेशक अन्य समयों में यीशु ने राज्य के बारे में बताते हुए अपने सुनने वालों को एक से एक दृष्टांत बताए। मरकुस के अनुसार वे दृष्टांत इस अवसर पर यीशु द्वारा इस्तेमाल किए गए दृष्टांतों के विषय वस्तु और रूप के जैसे थे। आसान भाषा में कहें तो उसने अपने सिखाने में इस ढंग का इस्तेमाल इसलिए किया क्योंकि यह इस्तेमाल किए जाने वाले सबसे बढ़िया ढंगों में से एक था। उससे पहले रब्बी इसका इस्तेमाल करते थे और उसने दृष्टांत (या सजीव उदाहरण) को सिखाने के अपने ढंगों का अनिवार्य भाग बना लिया।

दृष्टांत में बताए जा रहे विचार को केवल स्पष्ट ही नहीं किया जाता बल्कि इसमें मुख्य विचार को याद रखना आसान भी बना दिया जाता है। जो लोग उसकी शिक्षाओं से सहमत थे उन्हें आसानी से समझ में आ जाना था कि वह क्या कह रहा है; जो लोग उसके विरोधी थे उन्हें समझ में नहीं आना था। उनके लिए संदेश छिपा हुआ था; परन्तु उस सच्चाई को जो यीशु दे रहा था, समझने के इच्छुक लोगों के लिए दृष्टांत विस्तार से समझाने वाला और उपदेशपूर्ण होना था। मरकुस ने कहा, ''और बिना दृष्टान्त कहे वह उनसे कुछ भी नहीं कहता था'' (4:34)। यीशु अपनी पूरी सेवकाई में इसी ढंग का इस्तेमाल करता रहा। यीशु द्वारा दृष्टांतों के इस्तेमाल की बात सोचे बिना सिखाने की उसकी शैली पर विचार नहीं किया जा सकता।

एक अच्छा शिक्षक सिखाते हुए उसके पास उपलब्ध बढ़िया से बढ़िया ढंगों का इस्तेमाल करता है। वह दृष्टांत, कहानी या उदाहरण के समझने योग्य होने को मानता है। आम तौर पर एक अच्छा शिक्षक, एक प्रभावशाली प्रचारक या मन भावना उपदेशक अपनी प्रस्तुतियों में दृष्टांतों, कहानियों या उदाहरणों को शामिल करेगा। संप्रेषण की समझ सिखाने के इस ढंग की मांग करती है। उत्तम गुरु की सेवकाई इस सच्चाई की पुष्टि करनी है।

2. यीशु उन्हें ''वचन'' दृष्टांतों में बताता था, ''उनकी समझ के अनुसार'' (4:33)। सिखाने की अपनी शैली में वह *करुणा* के बड़े तत्व को शामिल करता था। स्पष्टतया वह उन लोगों के प्रति जो पीछे रह जाते थे, आदर और समझदारी दिखाता था। वह नहीं चाहता था कि कोई भी छूट जाए। वह समझने में ढीले सुनने वालों की उपेक्षा नहीं करता था।

यीशु लोगों को दृष्टांत नहीं देता था; बल्कि वह लोगों को, विशेषकर अपने चेलों को दृष्टांतों का इस्तेमाल करके समझाता था। जब उसे लगता था कि उन्हें संदेश की समझ नहीं आ रही

है, तो वह और समझाने या और प्रश्न पूछने के लिए धीमा हो जाता था। स्पष्टतया यह देखने के लिए कि उसके छात्र उसकी बात को समझ पा रहे हैं वह उन्हें बड़े ध्यान से देखता था। यदि उसे लगता कि उन्हें समझ में नहीं आ रहा है तो वह आवश्यक फेरबदल कर देता जिससे वह अपनी बात को और प्रभावशाली ढंग से उन तक पहुंचा पाए।

एक शिक्षक के लिए ''छात्रों पर केन्द्रित'' होना आवश्यक है। शिक्षाविदों के लिए एक पुरानी कहावत इस प्रकार है: ''यदि छात्रों को स्पष्ट नहीं होता, तो कोई पाठशाला नहीं है।'' इसे यह भी कहा जा सकता है, ''यदि छात्रों को समझ में नहीं आता, तो कोई पाठशाला नहीं है।'' शिक्षक किसी पुस्तक को नहीं पढ़ाता है बल्कि वह छात्रों के ताज़ा, खोजी मनों को पढ़ाता है। वह किसी विषय की शिक्षा नहीं देता है बल्कि वह विचार और करुणा के साथ छात्र को उस विषय में ले जाता है। उत्तम गुरु *लोगों* को सिखाता था।

3. मरकुस ने इस तथ्य की विशेष बात की कि यीशु ने अपने सिखाने में ''वचन'' को सबसे आगे रखा। उसने लिखा, ''वह उन्हें इस प्रकार के बहुत से दृष्टान्त दे देकर'' *वचन* समझाता था (4:33); यह वचन, सुसमाचार, राज्य का संदेश, अनन्त जीवन की सच्चाई था। वह अपना ज़ोर *संदेश* पर लगाने को समर्पित था। यीशु ने अपने आपको भटक जाने या पटरी से उतरने नहीं दिया।

अच्छे शिक्षक की सबसे बड़ी खूबी यह है कि शिक्षक अपने आपको अपनी कक्षा के वास्तविक उद्देश्य और विषय के साथ तालमेल बिठा लेता है। वह गौण बातें नहीं सिखाता (चाहे कई बार उनकी बात करना आवश्यक होता है); वह कक्षा के मुख्य विचार को सिखाता है। धमकियों के बावजूद अच्छा शिक्षक अपने छात्रों को कक्षा के केन्द्रीय फोकस पर वापस लाकर उन्हें वहीं रखता है। वह यह सुनिश्चित करता है कि छात्रों को वही मिले जो उन्हें समझना आवश्यक है, यानी जिस कोर्स का वह अध्ययन कर रहे हैं उसका सार। उत्तम गुरु मुख्य मुद्दे यानी राज्य पर ध्यान लगाए रखता था।

4. मरकुस ने यीशु के सिखाने की शैली के एक अंतिम विचार को जोड़ा। उसने कहा, ''परन्तु एकान्त में वह अपने निज चेलों को सब बातों का अर्थ बताता था'' (4:34)। यीशु संसार का अब तक का सबसे बड़ा गुरु था। उसने केवल बारह प्रेरितों को सिखाया ही नहीं बल्कि उन्हें समझाया भी। वह देहधारी हुआ गुरु था और संदेश उसमें देहधारी होकर लोगों के बीच चलता था (देखें यूहन्ना 1:14)।

एक अर्थ में यीशु ने अपने प्रेरितों से कहा, ''मेरे पीछे आओ, और मैं तुम्हें दिखाऊंगा कि जो मैं सिखा रहा हूं उसे कैसे सिखाना है। इसके अलावा मैं तुम्हें दिखाऊंगा कि कैसे रहना है और इसके सम्बन्ध में दूसरों के साथ कैसे बातचीत करनी है।'' वह इन लोगों को अपने आने वाले राज्य के लिए तैयार कर रहा था। उसका मानना था कि ऐसा उसकी प्रस्तुतियों के साथ-साथ उसके व्यवहार और उसके विश्वासों के द्वारा किया जाना आवश्यक था। इसलिए यह सबसे आवश्यक था कि उसके चेलों को उसके बताए हर दृष्टांत की अच्छी तरह से समझ में आ जाए। इस तथ्य के कारण उसके लिए उनके साथ विशेष समय बिताना आवश्यक था। बेशक उसने एकांत में जब भी उन्हें इकट्ठे होने का अवसर मिला, भीड़ को बताई गई अपनी बातें और विस्तार से समझाने के अवसर का लाभ उठाया।

निष्कर्ष: यीशु की सिखाने की तकनीकों से कौन से नियम दिखाए गए हैं? हमने उसके *ढंग, संदेश, करुणा और सलाह* देने को देखा। सिखाने की इस विस्तृत रूपरेखा को मानने वाले हर व्यक्ति को अपने प्रयास में कुछ न कुछ सफलता अवश्य मिलेगी।

यदि पूछा जाए, ''संसार के सचमुच में सबसे महान लोग कौन हैं?'' तो हम उस प्रश्न का उत्तर कैसे देंगे? क्या हम दवा के किसी डॉक्टर का नाम लेंगे? क्या हम प्रचारकों के नाम बताएंगे? क्या हम बड़े राजनेताओं के नाम बताएंगे? सम्भवतया इनमें से कोई भी हमारे ध्यान में नहीं आएगा। हम संसार भर में फैले अच्छे और विश्वसनीय शिक्षकों के बारे में सोचने लगेंगे जिन्होंने हमारे जीवनों को प्रभावित किया है। ये लोग दिमाग को चुनौती देने वाले, चरित्र बनाने वाले और जीवन बदलने वाले लोग हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि संसार का सबसे महत्वपूर्ण काम यीशु मसीह द्वारा दिखाए गए बड़े नियमों के अनुसार सिखाने का ही है।

शिक्षा की महानता हमें यीशु के सिखाने के मरकुस के विवरण के महत्व को नये सिरे से बताती है। उसकी टिप्पणियों से संसार में होने वाले सबसे बड़े काम के लिए सबसे विश्वसनीय अगुआई मिलती है।

हमारे लिए आकर उसके चेले बनने की आरम्भिक बुलाहट से आगे यीशु ने हमें बाहर जाकर दूसरों को सिखाने का आदेश दिया। कितने दुःख की बात है कि कुछ चेलों के लिए यह कहना पड़ा कि ''समय के विचार से तो तुम्हें गुरु हो जाना चाहिए था, तौभी यह आवश्यक हो गया है कि कोई तुम्हें परमेश्वर के वचनों की आदि शिक्षा फिर से सिखाए ...'' (इब्रा. 5:12)! हमारे लिए बुलाहट और चुनौती को मानना आवश्यक है, नहीं तो हमें आलोचना का सामना करना पड़ेगा। आइए अपने आप से पूछें, ''क्या मैंने चेला बनने की बुलाहट को मान लिया है?'' ''क्या मैंने जाकर सिखाने की चुनौती का जवाब दे दिया है?''; और ''क्या मैं वैसे सिखाता हूं जैसे मसीह सिखाता था?''

''यह कौन है ...?'' (4:35–41)

मत्ती, मरकुस, लूका और यूहन्ना के अधिकतर भाग को इस प्रमाण के रूप में देखा जाना चाहिए कि जिसे ''यीशु'' कहा जाता है, वह मसीहा यानी परमेश्वर के पुत्र को छोड़ कोई और नहीं है। यह पक्का प्रमाण किसी भी पाठक के देखने के लिए सुसमाचार के विवरणों में हर जगह हैं। लगभग हर पृष्ठ पर यह प्रमाण कहीं न कहीं हैं।

यीशु ने एक बड़ा व्यस्त दिन बिताया था और अब शाम हो चुकी थी। यह कहना कि वह व्यस्त रहा शायद कम बयानी होगी। उसने दुष्टात्मा से ग्रस्त एक व्यक्ति को चंगा किया था (मत्ती 12:22), और अपने मित्रों के विरोध का सामना किया था (मरकुस 3:20, 21), अपने शत्रुओं को उत्तर दिया था (मत्ती 12:24–29), और सम्भवतया कई और बार प्रचार किया था। यीशु और उसके प्रेरितों के भीड़ से निकलते हुए उसने उन्हें नाव में बैठकर उसे झील के दूसरी ओर ले जाने को कहा।

वचन यह कहता है कि वे ''वैसा ही उसे'' नाव ले चले (4:36)। स्पष्टतया उसके पास खाने पीने का कोई सामान नहीं थी। वे उसे रात या अगले दिन के लिए बिना कुछ लिए ले गए। वे थके हुए यीशु को रात भर झील के दूसरी ओर ले जाने के लिए जा रहे थे। उसकी आज्ञा से

वे एक नाव में बैठे, इसे पश्चिमी तट की ओर मोड़ा और लगभग छह मील के चलने के लिए तैयार हो गए। स्पष्टतया दूसरी नावें उनके साथ साथ गईं।

झील के बीच रास्ते में यीशु को नाव के पिछले भाग में जगह मिली जहां वह सिर रख सो गया। जब वह झील के बीच में पहुंचे, तो तूफ़ान जैसी तेज़ आंधी आ गई। आंधी से लहरें उठने लगीं, वे बहुत ऊंची हो गईं और वे झील में इधर उधर डोलने लगे। आंधी के तेज़ झोंके से ''लहरें नाव पर यहाँ तक लगीं कि वह पानी से भरी जाती थी'' (4:37)। गलील की झील इतनी बड़ी नाव को पलटने के योग्य आंधी के तेज़ झोंकों के लिए बदनाम थी और आज भी है।

ये बारह लोग, यीशु के यह प्रेरित जिनमें से चार जन अनुभवी मछुआरे थे, इन्हें लगा कि वे बड़ी मुसीबत में घिर गए हैं। संसार, आंधियों, और लहरों का सृजने वाला यीशु पीछे सो रहा था। वह तूफ़ान से परेशान नहीं था। निराश होकर कुछ प्रेरितों ने उसे जगाते हुए, उससे पूछा, ''हे गुरु, क्या तुझे चिन्ता नहीं कि हम नष्ट हुए जाते हैं?'' (4:38)।

यीशु ने चाहे तूफ़ान की आवाज़ नहीं सुनी थी, पर वह चेलों की विनती से प्रभावित हुआ और उठकर उसने इसका कुछ किया: ''उसने ... आँधी को डाँटा, और पानी से कहा, 'शान्त रह, थम जा!''' (4:39)। फिर यीशु की सामर्थ, ईश्वरीय सामर्थ को दिखाते हुए, मरकुस ने कहा, ''और आँधी थम गई और बड़ा चैन हो गया'' (4:39)।

यीशु ने केवल आंधी को ही नहीं डांटा बल्कि कुछ देर बाद चेलों की ओर मुड़कर उन्हें भी डांटा: ''तुम क्यों डरते हो? क्या तुम्हें अब तक विश्वास नहीं?'' (4:40)। उसके कहने का मतलब था कि वे जानते थे कि वह नाव में है, फिर भी उन्हें डर था कि कहीं नाव पलट न जाए। क्या उन्हें यह समझ नहीं थी कि यीशु जब चाहे तूफ़ान को शांत कर सकता है?

यह घटना में इस बात का पक्का प्रमाण है कि यीशु कौन है। हम इसे देखना सुनिश्चित करें, इसे आत्मसात करें और इसको मानें।

1. मरकुस का विवरण *मनुष्य मसीह* को हमारे लिए दिखाता है। जब यीशु नाव में बैठा तो वह वैसे ही थका हुआ था जैसे हम में से कोई भी दिन भर काम करने के बाद थक जाता है। आराम करने का अवसर मिला, यीशु ने गद्दी पर सिर रखा और सो गया। वह इतनी गहरी नींद सोया हुआ था कि तेज़ तूफ़ान से भी वह जगा नहीं। हमारे लिए यीशु के मनुष्य होने को पूरी तरह से स्वीकार करना कठिन है। हम कहते हैं कि ''वह पूर्ण मनुष्य और पूर्ण परमेश्वर कैसे हो सकता है?'' परन्तु इस विवरण में उसके मनुष्य होने को साफ़ साफ़ दिखाया गया है।

उस प्रकाश में जो प्रेरितों ने देखा था, एक बड़ा सवाल खड़ा होता है कि ''यह यीशु कौन है?'' तूफ़ान को ध्यान में रखते हुए दिया गया उत्तर यह कि वह परमेश्वर का पुत्र है। परमेश्वरत्व में से दूसरा, यीशु हमारे जैसा बनकर हमारे बीच में रहने आया। वह उतना ही मनुष्य जितना परमेश्वर हो ही न।

2. यह विवरण यह दिखाता है कि वह परमेश्वर अर्थात *सर्वशक्तिमान मसीह* है। उसने तूफ़ान के बीच में खड़ा होकर ''शांत रह'' शब्द बोला और तूफ़ान ''बिल्कुल'' रूक गया (4:39)। सात आयतों वाला यह दृश्य शानदार ढंग से बताता है कि यीशु सृष्टि का प्रभु अर्थात सर्वशक्तिमान है। उसने न केवल तूफ़ान को बनाया बल्कि उसे चलाता भी है। परमेश्वर के पुत्र के रूप में उसकी सामर्थ साफ़ दिखाई देती है।

परमेश्वर ने उसे अपने सृजे हुए संसार की लगभग हर चीज़ पर अधिकार दिया है। परन्तु उसने उसे मौसम की निगरानी का काम नहीं दिया है। संसार की सभी सेनाएं उस तूफ़ान को जो किनारे की ओर बढ़ता है, रोक नहीं सकते। हम इसके लिए अपने आपको तैयार कर सकते हैं परन्तु इसे बंद नहीं कर सकते। हमारे पास केवल मानवीय शक्ति है, ईश्वरीय शक्ति नहीं है।

परन्तु यीशु परमेश्वर का पुत्र है। पृथ्वी पर चाहे वह पूरी तरह से मनुष्य मुकम्मल इनसान परन्तु वह पूरी तरह से, ईमानदारी से और अनन्तकाल से परमेश्वर का पुत्र भी है। एक शब्द से, उसने संसार को रचा; और एक शब्द से वह तूफ़ान को शांत कर सकता था। उसमें भारी शक्ति है। वह परमेश्वर और मनुष्य का सम्पूर्ण मेल है। वह परमेश्वर का पुत्र और मनुष्य का पुत्र है।

3. इस वचन से यह भी पता चलता है कि वह *सिखाने वाला मसीह है*। आंधी हो या तूफ़ान में हो, धूप हो या छांव में वह हर अवसर पर लोगों को सिखा रहा था कि वह कौन है। चेलों ने उसे दूसरे आश्चर्यकर्म करते हुए देखा था। उसने दुष्टात्माओं को निकाला था, बीमारों को चंगा किया था, लकवे के रोगियों को चंगा किया था। यह ऐसे आश्चर्यकर्म थे जिसे कोई मनुष्य नहीं कर सकता था। प्रेरित अभी भी तूफ़ान से क्यों डरते थे जबकि यीशु नाव में उनके साथ था? उनके डर ने उसके विश्वास को छिपा दिया।

हम कहते हैं कि हमारा विश्वास यीशु में है और हम विश्वास करते हैं कि वह हमारे साथ है, फिर भी जीवन के तूफ़ानों का सामना करने पर हम निराशा में चिल्ला उठते हैं। परेशानी आने पर हम डर और विश्वास की अपनी कमी से हार मान सकते हैं, परन्तु यीशु कभी भी हमें नहीं छोड़ता है। वह हमें डांटता है; परन्तु वह हमें याद दिलाता रहता है, हमें समझाता रहता और हमें फिर से उस पर जो उसके बारे में सच है, ध्यान देने में सहायता करता है।

नाव में यह कौन है? यह प्रमाण हमें एक उत्तर देता है कि वह मनुष्य बना परमेश्वर है जो हमें सिखाने के लिए आया। वह परमेश्वर और मनुष्य के बीच कड़ी है। उसमें हम देखते हैं कि मनुष्य को कैसा *होना चाहिए* और उसमें हम देखते हैं कि परमेश्वर कैसा *है*।

निष्कर्ष: भयंकर तूफ़ान के साथ इस अनुभव के बाद मरकुस ने उस पर जो हुआ था चेलों की प्रतिक्रिया बताई: "वे बहुत ही डर गए और आपस में बोले, 'यह कौन है कि आँधी और पानी भी उसकी आज्ञा मानते हैं?'" (4:41)।

ऐसी घटना का अध्ययन करते हुए हमें चेलों के साथ यह पूछने को विवश करना चाहिए कि "यह कौन है?" चाहे हम जानते हैं कि वह मनुष्य मसीह है, परन्तु हमें उसके तूफ़ान को शांत करते हुए देखकर मानना पड़ेगा कि आंधी और तूफ़ान भी उसकी आज्ञा मानते हैं। यह तथ्य इस बात का प्रमाण देता है कि वह सर्वशक्तिमान मसीह है। जीवन के तूफ़ानों के बीच हमारे भयभीत होने पर जब वह हमें डांटता है, तो हम देखते हैं, वह हमें वास्तविक विश्वास तक पहुंचाने के लिए आया। वह हम में अपने काम को तब तक नहीं कर सकता जब तक हम यह विश्वास नहीं करते कि वह परमेश्वर का पुत्र है जो हमें बचाने के लिए आया।

जब तक हम उसकी इन तीन विशेष बातों को नहीं मानते तब तक हमें यह समझ में (या विश्वास) नहीं आता कि यीशु कौन है। वह मनुष्य मसीह है जो वहां चला जहां हम चलते हैं। वह सर्वशक्तिमान मसीह है जो देहधारी परमेश्वर के रूप में आज भी जीवन के हमारे तूफ़ानों को शांत कर सकता है; और सिखाने वाला मसीह जो अपने बारे में हमारे सामने सच्चाई को

रखता रहेगा। वह अपने मनुष्य होने के साथ हमें शांत करता है, अपने परमेश्वर होने के साथ हमें तसल्ली देता है और अपनी शिक्षा के साथ हमें विवश करता है। हमारे असली उद्धारकर्त्ता उसके रूप में जो हमें अनन्त जीवन में ले जाता है मसीह के ये तीनों विचार मिल जाते हैं।

टिप्पणयां

[1]मरकुस 4:35 संकेत देता है कि यह शिक्षा देने का केवल एक दिन था। [2]यह समझाते हुए कि दृष्टांतों का वर्गीकरण करने के अलग-अलग तरीके हैं, अलग-अलग विद्वानों ने यीशु के दृष्टांत 79, 71, 59, 39, 37, और 33 बताए हैं। (*हेस्टिंग्स डिक्शनरी ऑफ़ क्राइस्ट ऐंड द गॉस्पल्स,* सम्पा. जेम्स हेस्टिंग्स [न्यू यॉर्क: चार्ल्स स्क्रिब्नर'स संस, 1908], 313 में डब्ल्यू. जे. मोल्टन, ''पैराबोल।'') [3]समानांतर विवरण मत्ती 13:1-9 और लूका 8:4-8 में हैं। इस उपदेश की यीशु की व्याख्या मरकुस 4:13-20 में दी गई है। [4]वाल्टर बाउर, *ए ग्रीक-इंग्लिश लैक्सिकन ऑफ़ द न्यू टैस्टामैंट ऐंड अदर अर्ली क्रिश्चियन लिट्रेचर,* तीसरा संस्करण, संशो. व सम्पा. फ्रेड्रिक विलियम डैंकर (शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस, 2000), 759. [5]हॉवर्ड ज़ेड. क्लीवलैंड के अनुसार पुराने नियम में ''दृष्टांत'' (מָשָׁל, ***mashal***) पन्द्रह बार आता है। लूका 4:23 सहित जहां इसका अनुवाद ''कहावत'' हुआ है, नये नियम में पैराबोल चालीस से अधिक बार मिलता है, *पैरोइमिया* पांच बार इस्तेमाल हुआ है। यूहन्ना के लेखों में *पैरोइमिया* ''किसी उपदेशात्मक, प्रतीकात्मक या संकेतात्मक बात के लिए हो सकता है (यूहन्ना 10:6; 16:29)'' (*द ज़ौंडरवन पिक्टोरियल बाइबल डिक्शनरी,* सम्पा. मैरिल सी. टेनी [ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: ज़ौंडरवन पब्लिशिंग हाउस, 1963], 621 में हॉवर्ड ज़ेड. क्लीवलैंड, ''पैराबोल'')। बर्नार्ड रम्म की पुस्तक ''रूल्स ऑफ़ इंट्रपुटेशन ऑफ़ पैराबल'' में ये बातें थीं। दृष्टांत की मुख्य सच्चाई को पहचानना, यह तय करना कि प्रभु ने स्वयं उस दृष्टांत की कितनी व्याख्या की, संदर्भ में इसके अर्थ के किसी संकेत का पता लगाना, अति-विश्लेषण से बचना, दृष्टांत के आधार पर कोई शिक्षा बनाने से बचना और इसके समय-काल के संदर्भ को समझना। (बर्नार्ड रम्म, *प्रोटेस्टैंट बिब्लिकल इंटरप्रिटेशन* [बोस्टन: डब्ल्यू. ए. विल्डे कं., 1950], 179-83.) [6]बाउर, 779. [7]यदि बालक को ''उस मार्ग की जिसमें उसे जाना चाहिए'' शिक्षा देने का अर्थ यह था कि वह कभी उससे भटक नहीं सकता तो इसमें भविष्य तय करना और कुछ को या किसी को व्यक्तिगत निर्णय न लेने देने की बात होनी थी। इसके बजाय बाइबल के दृष्टांत और कहावतें तो सामान्य सच्चाई की बातें हैं। [8]और दृष्टांतों और उनके दृश्य की यीशु की व्याख्या के लिए देखें मत्ती 13. [9]जेरोम के बाद अगस्टिन ने उस आदमी को यरीहो में आदम में ले जाकर और कई और समानताएं बनाकर, धन्य सामरी के दृष्टांत में को रूपक बना दिया। उसने कहा कि याजक और लेवी पुराने नियम की याजकाई और सेवकाई को दर्शाते हैं, सामरी व्यक्ति मसीह को, सराय कलीसिया को और सराय का मालिक पौलुस को दर्शाता है। (अगस्टिन *क्वश्चन्स ऑन द गॉस्पल्स* 2.19.) गलातियों 4:24 में पौलुस ने इस रूपक का इस्तेमाल किया, जो कि नये नियम में साहित्यिक तकनीक का एक ही बार इस्तेमाल है। ''बाइबल की शिक्षा में रूपक देने (वास्तविक प्रस्तुतियों में से आत्मिक सच्चाइयां निकाले के लिए अलग करने के लिए) की व्यापक प्रासंगिकता थी'' (क्लीवलैंड, 29)। ओरिगन (चौथी सदी में) में पवित्र शास्त्र के उन वचनों में जो निश्चित तौर पर इस प्रकार से इस्तेमाल के लिए नहीं थे रूपक का बड़ा इस्तेमाल किया। [10]उदाहरण के लिए, देखें लूका 8:18; 14:35.

[11]सेल्सस दूसरी सदी के अंत का एक लेखक था, जो कि मसीहियत पर आक्रमण करता था, आम तौर पर नये नियम में से उद्धृत करते हुए दोहराता था। हमें उसकी जानकारी मुख्यतया *अगेंस्ट सेल्सस* पर मसीहियत पर उसके प्रहारों के ओरिगन के उत्तर से मिलती है। सेल्सस यीशु के ईश्वरीय होने को नकारता था और उसके देहधारी होने, आश्चर्यकर्मों और पुनरुत्थान के विचार पर हमला करता था। [12]तीस गुना 3,000 प्रतिशत है, साठ गुना 6,000 प्रतिशत है, और ''सौ गुना'' 10,000 प्रतिशत है। [13]विलियम हैंड्रिक्सन, *एक्सपोज़िशन ऑफ़ द गॉस्पल अकॉर्डिंग टू मरकुस,* न्यू टैस्टामैंट कॉमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1975), 155. [14]समानांतर विवरण मत्ती 13:10-17 और लूका 8:9, 10 में हैं। [15]हैंड्रिक्सन, 152. [16]आर. सी. फोस्टर, *स्टडीज़ इन द लाइफ़ ऑफ़ क्राइस्ट* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1971), 561. [17]समानांतर विवरण मत्ती 13:18-23 और लूका 8:11-15 में हैं। [18]यदि किसी को ''लगता है'' कि प्रभु की उपस्थिति है तो उनके पास पूरा प्रमाण है कि उनमें ''भावना'' है, और कुछ

नहीं! [19]''होशन्ना'' चिलाने वाले अधिकतर लोग गलील से थे, जहां यीशु के बहुत से चेले थे। इसके विपरीत ये लोग चिल्ला रहे थे यहूदिया से थे, जिन्हें प्रमुख धर्मतन्त्र ने लोगों पर अपने नियन्त्रण को देने के उनके भय के कारण उन्हें उसके विरुद्ध चिल्लाने के लिए मजबूर किया। इसलिए यह राजनैतिक और धार्मिक झुकाव रखने वाला गुट होता था जिसने पुकारा, ''उसे क्रूस दो!'' [20]इब्रानियों 12:5, 6 में का उद्धरण नीतिवचन 3:11, 12 से लिया गया है।

[21]ठोकर लगने का पत्थर (σκάνδαλον, ***skandalon***) ''पाप के लिए प्रलोभन'' है (बाउर, 926)। [22]इसी ''खमीर'' के रूपक का इस्तेमाल मत्ती 16:12; मरकुस 8:15; 12:38; और लूका 12:1 में किया गया है। [23]एक समानांतर विवरण लूका 8:16–18 में है। बहुतों को लगता है कि मरकुस 4:21–23 की बातों की व्याख्या करना कठिन है। इसके विपरीत, अपनी बात को बिल्कुल स्पष्ट करते हुए यीशु समझा रहा था कि वह दृष्टांतों में क यों बातें करता था। [24]हैंड्रिक्सन, 161. [25]फरीसियों के कामों पर हमला करने वाले ऐसे वचन मत्ती 15:1–9 और मरकुस 7:5–13 में मिलते हैं। [26]अटलांटा का चार्ल्स स्टैनली टीवी पर आम तौर पर उसे ''रौशनी मिलने'' की बात करता है; एक टीवी इंटरव्यू में उसने दावा किया कि परमेश्वर ने उसके साथ सीधे बात की। [27]ये सब केवल ऐसे लोगों के मन की उपस्थिति की काल्पनिक सोच है जो चाहते हैं कि परमेश्वर उनसे बात करे। [28]हैंड्रिक्सन, 164. [29]ऐलन ब्लैक, *मरकुस,* द कॉलेज प्रेस NIV कॉमैंट्री (जोपलिन, मिसोरी: कॉलेज प्रेस पब्लिशिंग कं., 1995), 93. [30]प्रिमिलेनियलिस्ट (अर्थात हज़ार वर्ष के राज्य का विचार रखने वाले) लोग राज्य को टालने की शिक्षा को सच मानते हैं, परन्तु बाइबल में कहीं पर भी यह विचार नहीं मिलता।

[31]जोसेफ़स ने *आटोमेटोस* शब्द का इस्तेमाल किया जब उसने लिखा कि यरूशलेम के विनाश से थोड़ा पहले (70 ई.), मन्दिर का फाटक ''रात के छठे घण्टे के लगभग अपने आप खुला देखा गया'' (जोसेफ़स *वार्स* 6.5.3 [293])। [32]ब्लैक, 96. [33]जेम्स बर्टन कॉफ़मैन, *कॉमैंट्री ऑन मरकुस* (ऑस्टिन, टैक्सस: फ़र्म फ़ाउंडेशन पब्लिशिंग हाउस, 1975), 84. [34]समानांतर विवरण मत्ती 13:31–34 और लूका 13:18, 19 में हैं। [35]हेरल्ड एन. मोल्डनके ऐंड अल्मा एल. मोल्डनके, *प्लांटस ऑफ़ द बाइबल* (लंदन: कैंगन पॉल, 2002), 55–56. [36]हैंड्रिक्सन, 174 में उद्धृत, डेविड एवरेट ''लाइन्ज़ रिटन फ़ॉर ए स्कूल डेक्लमेशन।'' [37]ब्लैक, 97. [38]समानांतर विवरण मत्ती 8:18, 23–27 और लूका 8:22–25 में हैं। [39]हैंड्रिक्सन, 174. [40]वहीं।

[41]जॉन बी. काल्किन, *हिस्टॉरिकल जाग्रफ़ी ऑफ़ बाइबल लैंड्स* (फिलाडेल्फिया: वैस्टमिंस्टर प्रैस, 1904), 15, 50. [42]वारेन डब्ल्यू. वियर्सबे, *द वियर्सबे बाइबल कॉमैंट्री: न्यू टैस्टामैंट* (कोलोराडो स्प्रिंग्स, कोलोराडो: डेविड सी. कुक, 2007), 124; ब्लैक, 99. [43]यूनानी शब्द (προσκεφάλαιον, ***proskephalaion***) जिसका अनुवाद ''गद्दी'' हुआ है, का मूल अर्थ ''सिरहाना'' है। विलियम हैंड्रिक्सन ने बताया: ''यह नाव में रखी 'गद्दी' हो सकती है, ... चमड़े का सिरहाना हो सकता है; शायद लकड़ी (नाव का भाग) भी हो सकता है, ... इसके स्रोत के अनुसार, मूल में जो भी शब्द इस्तेमाल किया गया हो उसका वास्तव में अर्थ यह है कि यह आराम करने के लिए 'सिर रखने के लिए कोई चीज़ थी'; इस कारण यह सिरहाना ही है'' (हैंड्रिक्सन, 177)। 1986 के सूखे के बाद गलील की झील के तलझट में मिली एक नाव से, इसके आकार का अनुमान लगाया जा सकता है। यह बारह से अकि लोगों के लिए पर्याप्त होगी। (जोसेफ एम. होल्डन ऐंड नॉरमन गिस्लर, *द पॉपुलर हैंडबुक ऑफ़ आरक्योलोजी ऐंड द बाइबल: डिस्कवरीस दैट कन्फर्म द रिलायबिलटी ऑफ़ सक्रिप्चर* [यूजीन, ओरिगन: हार्वेस्ट हाउस पब्लिशर्स, 2013], 359.)। [44]बाउर, 918. [45]जोसेफ़स *लाइफ़ ऑफ़ फ़्लेवियस जोसेफ़स* 45 [235]।